Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2582–046X
International Journal for Research in Applied History
Website: www.anshjournal.com

राजपूताना के रजवाड़ो का अंतिम युद्ध : बासणपी युद्ध (1828 ई.)

Mr. Tane singh Sodha
Ph.D. Scholar (Department of History)
Bhupal Nobels' University, Udaipur
Email ID : tssodha80@gmail.com

भूमिका

युद्धों की रणस्थली और योद्धाओं का रणांगण रहे राजपूताना में गौ, ब्राह्मण, नारी, धर्म, भूमि, स्वामिधर्म, शरणागत रक्षा और वचन पालनार्थ तो प्राणोत्सर्ग करना यहां गौरव का विषय एंव अक्षुण्ण परम्परा का हिस्सा रहा है। यहाँ के त्यागी और बलिदानी वीरों ने अपनी सांस्कृतिक थाती की सुरक्षा एवं उसकी गौरवशाली परम्पराओं, मर्यादाओं तथा आदर्शों की प्रतिष्ठा के लिए बड़ी से बड़ी भौतिक सुख–सुविधाएं प्रदान करने वाली सम्पदा को ठुकराया है। अपने धर्म व मर्यादा की रक्षा करने वाले स्वाभिमानी वीरों का यशोगान यहां की बातों व ख्यातों में सर्वत्र वर्णित है।[1] परन्तु छोटी–छोटी सी बात पर भी मरना–मारना तो यहां हंसी का खेल था। या फिर जब दोनो पक्ष किसी बात को अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना देते थे, तो उसका परिणाम रक्तरंजित ही होता था, जिसकी पराकाष्ठा का उदाहरण मेवाड़ महाराणा भीमसिंह की राजकुमारी कृष्णाकुमारी से विवाह को लेकर जोधपुर महाराजा मानसिह और जयपुर महाराजा जगतसिंह के मध्य हुआ प्रकरण सर्वविदित है।

जब राजा या सामन्त लोग किसी बात पर अड़ जाते थे तो उसका परिणाम क्या होगा, यह ईश्वर ही जानता था। प्रतिशोध की ज्वाला तो इतनी भयंकर होती थी कि कई बार तो पूरा का पूरा वंश या कुटुम्ब ही बदले की भेंट चढ़ जाता था। एक छोटी सी बात या घटना कब किसी भयंकर महायुद्ध का रूप धारण कर ले,यह कोई जान नहीं सकता था। वैर और बदले की भावना तो इतनी प्रबल होती थी कि यदि दो भिन्न वंश अथवा परिवारों में एक बार किसी कारण से वैमनस्य उत्पन्न हो जाए तो वह पीढ़ी–दर–पीढ़ी चलता रहता था।[2] मेवाड़ राजदरबार में बून्दी के एक याचक चारण द्वारा दरबारी शिष्टाचार का उल्लंघन करते हुए, पगड़ी उतारकर महाराणा को अभिवादन करने की बात को लेकर मेवाड़ महाराणा रत्नसिंह (1528–1531 ई.) और बून्दी के शासक सूरजमल हाड़ा के बीच ऐसा ही एक वैर शुरू हुआ था।[3] जिसमें मेवाड़ के चार महाराणाओं को अपने प्राणों का बलिदान देना पड़ा, जिसे राजस्थान के इतिहास का सबसे लम्बा (200 वर्षों तक) चलने वाला हाड़ा–सिसोदियों वैर कहा जाता है। उसके संबंध डॉ. रघुवीरसिंह सीतामऊ ने अपनी पुस्तक "पूर्व–आधुनिक राजस्थान" में इस प्रकार लिखते है कि "यो हाड़ा–सिसोदियों के उस इतिहास प्रसिद्ध वैर का प्रारम्भ हुआ, जो शताब्दियों तक चलता रहा और जब–जब उसका अंत करने के लिए प्रयत्न किये गये तब–तब रत्नसिह–सूरजमल की शिकार वाली घटना की पुनरावृति होकर उस वैर की उत्कटता में वृद्धि ही हुई।"[4] ऐसे सैकड़ो दृष्टांत राजस्थान के इतिहास में भरे पड़े है।

वैर अर्थात बदला न ले सकने वाले को कपूत समझा जाता था और उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा का माप व ग्राफ कम हो जाता था। ऐसे वैर पीढ़ियों चला करते थे। मारवाड़ी में एक कहावत है कि वैर कभी बुढ़ा नहीं होता अर्थात काफी समय बीत जाने के बाद भी वैर पुराना नहीं होता। मौका आने पर उसकी आने वाली पीढ़ियों द्वारा वैर लिए जाने के अनेकों उदाहरण लोक साहित्य में मिलते है।[5]

ऐसा ही एक वैर और प्रतिशोध जैसलमेंर और बीकानेर रियासत के बीच बंध गया। बात तो विवाहोत्सव में एक मामूली व छोटी–सी घटना को लेकर शुरू हुई थी लेकिन दोनो रियासतों ने इसे अपने स्वाभिमान व प्रतिष्ठा से जोड़कर मूंछ का सवाल बना दिया जिसने शीघ्र ही एक बड़े युद्ध का रूप ले लिया और दोनो पक्षों को भारी जन–धन हानि उठानी पड़ी। यह घटना 15 से अधिक वर्षो तक दोनो

रियासतों के बीच विवाद, अशान्ति और प्रतिशोध का कारण बनी रही। यह विवाद इतिहास में बासनपी (जैसलमेर) का युद्ध के नाम से प्रसिद्ध हुआ। जैसलमेर के गौरव का प्रतीक यह युद्ध जैसलमेर के महारावल गजसिंह और बीकानेर के महाराजा रतनसिंह के बीच 27 मार्च 1828 ई. को लड़ा गया था। जैसलमेर रियासत के तत्कालीन महारावल गजसिंह के दरबारी और राजकवि साहिबदान रतनू सिरूवा गांव (जैसलमेर) ने 1835 ई. में 'गज्जन प्रकाश' नामक प्रशस्ति काव्य लिखा है, जिसमें इस युद्ध का विशद् वर्णन है। यह काव्य प्रशस्ति अभी तक अप्रकाशित है यह सम्प्रति कवि अम्बादान देवल सुमलियाई गांव (जैसलमेर) के निजी संग्रह में है।[6] यह युद्ध अब तक विस्तृत घटनाक्रम एवं विवरण के साथ इतिहासकारों की कलम के नीचे आने से बचा रहा हांलाकि आंशिक उल्लेख सभी ने किया है फिर किसी भी इतिहासकार ने इस पर विस्तृत कलम नहीं चलाई। आइयें देखते हैं युद्ध के कारण, मुख्य घटनाएं, प्रमुख योद्धा,परिणाम,संधि–समझौता और अन्य अनछुए पहलू।

जैसलमेर रियासत की युद्ध से पूर्व की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि– महारावल अखैसिंह की मृत्यु के बाद विक्रम संवत 1877 (1761 ई.) में उसका ज्येष्ठ पुत्र मूलराज राजगद्दी पर बैठा।[7] उस समय जैसलमेर राज्य की सीमाओं पर सर्वत्र अराजकता फैली हुई थी।[8] उनका अर्द्ध शताब्दी का सुदीर्घ शासन राजनैतिक दृष्टि से अत्यंत दुर्बल और राज्य की सीमाओं के हास का काल था। महारावल मूलराज ने मेहता स्वरूपसिंह को अपना दीवान नियुक्त किया था। वह महात्वाकांक्षी व्यक्ति था तथा राज्य का सर्वेसर्वा बने रहना चाहता था। राज्य के सांमत उसकी तानाशाही रवैये से परेशान थे। अब सांमतो के लिये अपने परम्रागत गौरव की रक्षा के लिये दीवान की हत्या के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं रह गया था।[9] आखिर सांमतो ने युवराज रायसिंह के द्वारा उसे मरवा दिया।

उसके बाद परम्परानुसार मृतक दीवान स्वरूपसिंह के पुत्र सालिमसिंह को दीवान बनाया गया जो अपने पिता से कई गुना ज्यादा महात्वाकांक्षी, चतुर, चालाक, धूर्त एवं कुशाग्र बुद्धि वाला व्यक्ति था। सालिम सिंह ने अपने पिता की मृत्यु का बदला युवराज रायसिंह के परिवार का सर्वनाश कर ही नहीं लिया बल्कि उसने उसके मार्ग का कांटा बनने वाले प्रत्येक उस व्यक्ति को यमलोक पंहुचाया। वह सालिम से जालिम बन गया। यथा जोरावर सिंह व खेतसिंह भाटी जिजनियाली, मेघसिंह भाटी बारू, हाथीसिंह सोढा खुहड़ी जैसे कई महत्वपूर्ण सांमतो को तो मरवाया ही, यहीं नहीं मारवाड़ के बहादूरसिंह चांदावत जैसे शक्तिशाली सांमत को मरवा कर उसका सारा सामान हस्तगत कर लिया।[10]

अयरे बादरियाह, पादरियाह कीधा पिसण।
अधपत आदरियाह, दाड घरारी देणनूँ।।[11]

महारावल मूलराज के कमजोर व दुर्बल व्यक्तित्व के कारण सालिमसिंह स्वैच्छाचारी बन गया। मेहता सालिमसिंह ने महारावल की जीवित अवस्था में ही राजगद्दी के 6 दावेदारों को छोड़कर महारावल मूलराज के 4 वर्षीय प्रपोत्र गजसिंह को उतराधिकारी बनाया।[12] यह उसकी सर्वोच्ता की पराकाष्ठा थी, यहीं नहीं उसके आंतक के कारण प्रजा में त्राहि–त्राहि मच गई। 1819 ई. में अंग्रेजो से सन्धि हो जाने के बाद उसने अंग्रेज अधिकारियों से अपने अच्छे संबंध बना लिये जिससे उसके प्रभाव में वृद्धि होती गई। उसके कारण पालीवाल बाह्मणों को 1823 ई. में अपने 84 खेड़ो (गांवो) को खाली कर वतन छोड़ना पड़ा।[13] 1818 ई. में अगेजो से सन्धि के बाद राज्य की आर्थिक स्थिति में गिरावट आई, साथ ही ब्रिटिश प्रभाव व हस्तक्षेप बढता गया। 1819 ई. में महारावल मूलराज के बाद सालिमसिंह ने गजसिंह को राजगद्दी पर बैठाया और उन्हें कठपुतली बनाकर राजकाज चलाने लगा। सालिमसिंह ने अपनी प्रतिष्ठा में वृद्धि करने के उद्देश्य से रावल गजसिंह का विवाह उदयपुर महाराणा की कन्या से करवाया।[14] चूंकि इस युद्ध की पटकथा भी इसी विवाहोत्सव से जुड़ी हुई है।

उदयपुर से विवाह का प्रस्ताव–

जैसा उपर बताया जा चुका है कि इस युद्ध का मूल विवाद व घटना जैसलमेर के महारावल गजसिंह के विवाहोत्सव से जुड़ी है, हुआ यूं कि विक्रम संवत 1877 (सन् 1820 ई.) में मेवाड़ महाराणा भीमसिंह (1778–1828 ई.) की दो राजकुमारियों व कुंवर अमरसिंह की राजकुमारी का विवाह जैसलमेर के महारावल गजसिंह (1819–1846 ई.) के साथ राजकुमारी रूपकुंवर का, बीकानेर के महाराजा सुरतसिंह (1787–1828 ई.) के राजकुमार रतनसिंह (जो बाद में 1828–1851 ई. तक बीकानेर के शासक रहे।) के साथ राजकुमारी अजबकुंवर का और किसनगढ़ महाराजा कल्याणसिंह (1798–1838 ई.) के राजकुमार मोकमसिंह के साथ महाराणा की पोती व कुंवर अमरसिंह की राजकुमारी कीकाबाई का विवाह,होना तय हुआ।[15] मेहता उमेदसिंह द्वारा लिखित तवारीख टावरियों री ख्यात में इसका विवरण इस प्रकार मिलता है कि संमत 1876 की साल में महता सालमसिंघ जी ने महारावल जी श्री गजसिंघ जी का बेहाव उदेपुर महारांणा जी श्री भीमसिंघ जी की बेटी रूपकांवर से करवाया।16 नियत तिथि पर बारातें रवाना हुई। जैसलमेर के महारावल गजसिंह की बारात के पंहुचने के समय पर समकालीन स्रोत अलग– अलग विवरण देते है।

वीर विनोद के अनुसार तय समय पर तीनों जगहों से बारातें आई, जिनमें से दो जगह के दूल्हे तो शान–शौकत और जुलूस के साथ आये,लेकिन जेयसलमेर के रावल गजसिंह किसी खानगी काम में फंस जाने के सबब लवाजमह के साथ जल्द न आ सके, पिछली रात को अकेले सांडनी पर सवार होकर आये।[17] तवारीख जैसलमेर में इस प्रकार लिखा है कि "इसी अरसे में उदैपुर से नारेल आया जनानी सवारी तो शहर को कराई, पिंडा (स्वंय) देवीकोट से 7 सवार साथ सातवें दिन अैन वक्त लग्न के उदैपुर दाखिल हुये।[18] उस समय महारावल गजसिह कोड़ियासर गांव में पालीवालों व भाटियों के बीच हुई कलह को सुलझाने के लिए गये हुए थे, और देवीकोट में थे, यहीं पर उन्हें उदयपुर से विवाह प्रस्ताव मिला।[19] इसका समर्थन डॉ. हरिवल्लभ माहेश्वरी भी करते है। बीकानेर व किसनगढ़ की बाराते वहां समय पर पहुँची। सबसे अंत में जैसलमेर की बारात आई।[20] परन्तु जैसलमेर के महारावल गजसिंह अपने कुछ ही साथियों के साथ वहां पहुँचे थे। जबकि बीकानेर व किशनगढ़ के राजकुमार बड़े लवाजमे व शान–शौकत और हाथी घोड़ो व सांमतो व दरबारियों के काफीले के साथ पहुँचे थें। यहाँ यह सही प्रतीत होता है कि जब महारावल को उदयपुर से विवाह का प्रस्ताव मिला, उस समय वे राज्य दौरे पर देवीकोट में थे उन्हे अल्प समय में उदयपुर पहुंचना था इसलिए वे कुछ साथियों के साथ ही उदयपुर रवाना हो गये और पीछे दीवान सालिमसिंह मेहता को बारात लेकर आने का आदेश दिया। दीवान सालिमसिंह मेहता, घोड़ो व सांमतो–सरदारों व दरबारियों और किस्बियों के काफीले के साथ विवाह के तीन बाद बारात लेकर पहुँचा।[21] जैसलमेर री ख्यात व टावरियों री ख्यात, बारात के पहुंचने के समय के बारे में मौन है। डॉ. हरिवल्लभ माहेश्वरी ने लिखा है कि मेहता सालिमसिह पीछे से पूरी बारात व धन–सामग्री इत्यादि लेकर पहुँचा।[22] इस बात की पुष्टि गज्जनप्रकाश से भी होती है कि विवाह में जब 5 दिन शेष रहे तब महारावल रवाना हुए। इससे यह प्रमाणित होता है कि जैसलमेर की बारात विवाह मुहूर्त संपन्न हो जाने के पश्चात ही पहुंची थी जबकि महारावल गजसिंह अपने कुछ साथियों सहित पहले वहां पहुँचे थे।

युद्ध के मूल कारण–

जहां तक युद्ध के कारणों का सवाल है, गूढ़ शोध से पता चलता है कि मूलतः दोनो शासको के बीच विवाद उदयपुर में विवाहोत्सव के दौरान ही हुआ था। लक्ष्मीचन्द सेवग के अनुसार "चंवरी, बधाई, त्याग वगैरे में द्रव्य ज्यादे खर्च ने से बीकानेर श्री महाराजा रतनसिंह जी साहब व किसनगढ़ महाराजकुंवार

महोकमसिंहजी को रश्क हुआ घास पर तकरार कराके दोनो रईस लड़ने को चढ़ आये जब भाटी सरदार भी वगैर इतला श्री दरबार के मुकाबले को त्यार हुए।"[23] डॉ. हुक्मसिह भाटी ने भी इसी बात का समर्थन करते हुए लिखा है कि जब चारणों व ढालियों ने भाटियों की प्रशंसा के पुल बांध दिए तो राठौड़ जल–भुन कर राख हो गये। वही कुछ इसके उलट भी मिलता की राठाड़ौ की शान–शौकत के सामने जैसलमेर के महारावल का रूतबा कम था और बीकानेर महाराजा द्वारा उन पर ताना कसा गया। आगे चलकर यह घटना दोनो राज्यों के बीच कशमकश का कारण बनी।[24] इस बात को लेकर दोनों के बीच तकरार हो गयी।

कविराजा श्यामलदास ने लिखा है कि विवाह के समाप्त होते ही तीनों बारातों को विदाई दे दी गई थी।[25] लेकिन लक्ष्मीचन्द सेवग,जगदीशसिंह गेहलोत, हरिदत व्यास व रिड़मलसिंह भाटी के अनुसार महारावल गजसिंह को विवाह के उपरान्त साढ़े चार माह तक उदयपुर में ही रखा गया था।[26] इसकी पुष्टि गजनप्रकाश होती है कि जिसके अनुसार महारावल गजसिंह को विवाह के उपरान्त तीन माह तक उदयपुर में ही रोका गया था।[27] रोकने का कारण स्पष्ट था कि विवाद ज्यादा नहीं बढ़े, इसलिए महाराणा भीमसिंहजी ने यह कदम उठाया था ताकि समय बीतने के साथ दोनो उक्त घटना को भूल जाएगे।

डॉ. हरिवल्लभ माहेश्वरी उक्त घटना को कुछ फेरबदल के साथ लिखते है कि ""कहा जाता है कि एक दिन उदयपुर के महाराणा के निवास में रानियों द्वारा जैसलमेर के महारावल के रूप यौवन की बहुत प्रंशसा महाराणा के समक्ष की गई तब महाराणा ने उदास होकर कहा की बाकी सब तो ठीक है, पर जैसलमेर की आर्थिक स्थिति अन्य दोनो जमाताओं के राज्य से कमजोर है। जब यह बात रनिवास की दिवारों को बेधती हुई जैसलमेर के जनवासे तक पहुंची तो सालिमसिंह को बहुत दुःख हुआ, सालिमसिंह ने विवाह के अवसर पर महारावल की आर्थिक स्थिति के बारे में फैली भ्रांतियों को दूर करने के लिये जैसलमेर के शासक द्वारा चवंरी, बधाई,त्याग आदि विवाह रस्मों में अत्यधिक उदारता से धन बांटा गया एवं विदाई के अवसर पर दीवान सालिमसिंह द्वारा सोने की मुहरें बरसाने के प्रश्न पर अन्य दो बारातों बीकानेर व किशनगढ़ से अत्यधिक विवाद एवं झगड़े की नौबत आई।"[28] हरिदत व्यास ने भी अपने ग्रथ में लिखा है कि चतुर सालिमसिंह ने महारावल के विवाहोपलक्ष्य में त्याग आदि में मुक्त–हस्त होकर अपार द्रव्य लुटाया। इस महोत्सव उपलक्ष्य में ही एक दिन राजत्रय के सैनिकों में क्षुद्र बात के लिये आपस में वाद–विवाद हो गया।[29] यहां यह कहना समीचीन होगा कि जहां भाटी इतिहासकारों ने भी तवारीख जैसलमेर को आधार बनाकर इस घटना का मूल कारण जैसलमेर महारावल द्वारा विवाहोत्सव में बीकानेर व किशनगढ़ महाराजा से अधिक द्रव्य खर्च करने से राठौड़ शासकों के खिन्न होने और ईर्ष्या वश राजकुमार रतनसिह द्वारा महारावल जैसलमेर के साथ अभद्र व्यवहार से बात तकरार, बहस और फिर मामला लड़ाई तक पहुंचने को बताया है।

यहां यह बात ध्यान देने योग्य यह है कि जब जैसलमेर की बारात और धन सामग्री पाणिग्रहण व विवाहोत्सव के पश्चात ही मेहता सालिमसिंह लेकर पहुंचा था तो चंवरी के समय जैसलमेर के शासक द्वारा उदारता से धन बांटना असंभव लगता है। तथ्य यह भी है कि मुहरे भी चंवरी के समय ही बरसाई जाती है और यह कहना भी अतिश्योक्ति नही होगा की राज्य प्रशासन व द्रव्य सामग्री पर मेहता सालिमसिंह का पूरा नियंत्रण था तो उसके बिना उक्त वर्णित उदारता से इतनी अपार सामग्री कैसे लुटाई जा सकती थी, समीचीन नहीं लगता। टावरियों री ख्यात के अनुसार सालिमसिह 11 सोने के मोंहरों की थैली लेकर गया था।[30] हाँ, इतना अवश्य कि बारात व सालिमसिंह के पहुंचने के पश्चात जो भी रस्में हुई हो, उनमें वे खुलकर द्रव्य प्रर्दशन कर सकते थे परन्तु विवाहोंत्सव की मुख्य रस्में मुख्य बारात से पहुंचने से पहले संपन्न हो चुकी थी।

इसी ग्रंथ के अनुसार हाथी, ऊँटों और घोड़ो को घास चराने वाले दो व्यक्तियों के बीच बागा या कलार (घास की ढेर) से घास पहले लेने को लेकर हुई, जैसलमेर के घास चरवाहे ने, बीकानेर के घास चरवाहे को पीटा और तलवार के वार से हाथ काट दिया। घास पर विवाद होने की पुष्टि तवारीख जैसलमेर से भी होती है।

वास्तव में घटना का श्रीगणेश विवाह समाप्ति के पश्चात दान देने की होड़ को लेकर हुआ जबकि यह चंवरी के तुरन्त बाद की घटना नहीं हो सकती क्योंकि मेहता सालिमसिंह चंवरी की रस्म पूर्ण के बाद बारात लेकर पहुंचा था। महारावल गजसिंह के समकालीन व उनके आश्रित कवि साहिबदान रतनू जो गांव सिरूआ, जैसलमेर के निवासी थे जिन्होंने इस युद्ध पर 1835 ई. में "गजनप्रकाश" नामक ग्रंथ लिखा है, चंवरी के बाद दोनो पक्ष किस्बियों को दान देने में होड़ करने लगे।[31] जिससे दोनो पक्षों में विवाद बढ़ गया। इस प्रकार हमें इस विवाद के दो कारण दिखाई पड़ते है। प्रथम दोनो पक्ष दान देने में होड़ दूसरा कारण बीकानेर महाराजा द्वारा जैसलमेर के महारावल पर ताना कसना। हालांकि यह दोनो कारण गौण प्रतीत होते है गजनप्रकाश के अनुसार इन घटनाओं के बाद बीकानेर वाले झगड़ा करने का बहाना ढूंढने लगे। इस प्रकार मामूली तकरार तो दान देने की होड़ को लेकर हुई परन्तु मूल विवाद तो पशु चरवाहों के बीच घास को लेकर ही हुआ, यही अधिक युक्तिसंगत लगता है। गजनप्रकाश के अनुसार जैसलमेर के घास चरवाहे ने, बीकानेर के घास चरवाहे को पीटा और तलवार के वार से हाथ काट दिया। जिसके कारण विवाद बढ़ गया। भाटियों द्वारा उनके आदमी के साथ मारपीट करना व उसका हाथ काटना राठौड़ों को नवारा गुजरा और पहले से जले–भुने राठौड़ों के लिए इस घटना ने आग में घी का काम किया। अब बीकानेर व किशनगढ़ दोनो रियासतों के राठौड़ो ने युद्ध के तैयार होने लगे यह सूचना जैसलमेर के भाटियों लगी को तो वे भी प्रत्युतर में युद्ध के लिए तैयार हो गये। गज्जनप्रकाश में कवि साहिबदान में राठौड़ो की संख्या 9000 तथा भाटियों की संख्या 500 बताई हैं।[32] वास्तव में दोनो पक्षों की वास्तविक संख्या कितनी थी, इसका हमारे पास अन्य स्रोत तो नहीं परन्तु यह सही जैसलमेर से जो बाराती होंगे वो वहां योद्धा होंगे जबकि बीकानेर व किशनगढ़ दोनो रियासतों के राठौड़ो की संख्या जैसलमेंर के मुकाबले ज्यादा ही थी क्योंकि सभी तत्कालीन स्रोत इस बात की पुष्टि करते है कि दोनो रियासतों की बारातें बड़े लवाजमे व शान–शौकत और हाथी घोड़ो व सामन्तों व दरबारियों के काफीले के साथ आई थी। परन्तु जैसलमेर के बारातियों की संख्या 500 से अधिक नहीं थी।

खैर जो भी हो, गजनप्रकाश के अनुसार जब दोनो पक्षों को झगड़ने व युद्ध के लिए तैयार होने की जानकारी महाराणा भीमसिंह को मिली तो उन्होंने शाहपुरा के महाराजा अमरसिंह (1796–1827 ई.) व सरदार सिंह के पुत्र हम्मीर सिंह को समझाइश के लिए भेजा।[33] तब राठौड़ो ने कहा कि हम तो बागा या कलार (घास की ढेर) का हिसाब तलवारों से करेंगे। बहुत कोशिस के बाद जब राठौड़ नहीं माने, तब केलपुरा ठिकाने के ठाकुर ने कहा कि आप भाटियों को कम संख्या में देखकर जोर भर रहे हो, तो अब हो जाओं तैयार हम सिसोदिया भाटियों की ओर से लड़ेंगे। आओ रणखेत में, सिसोदियों को भाटियों के पक्ष में एकजुट होते देखकर राठौड़ो का हौंसला पस्त हो गया। उन्होंने वहां पर युद्ध का विचार त्याग दिया। उस समय तो मेवाड़ महाराणा भीमसिंह व शाहपुराधीश ने समझदारी दिखाकर सुलह करवा दी और स्थिति को सम्भाल लिया। लेकिन बीकानेर के शासक रतनसिंह के मन में महारावल गजसिंह के प्रति ईर्ष्या व बदले की भावना घर कर चुकी थी। इसके पश्चात दोनो राज्यों के बीच एक दूसरे के सीमावर्ती क्षेत्रों से पशु चुराने या सीमा विवाद के बहाने एक दूसरे को नीचा दिखाने प्रयत्न शुरू हो गये। जो अंत में बासनपी के युद्ध के रूप में परिणित हुआ। हांलाकि बीकानेर के महाराजा सुरतसिंह जब तक जीवित रहे उन्होने इस मुद्दे को बड़ा विवाद बनने नहीं दिया जबकि राजकुमार रतनसिह के मन में प्रतिशोध की आग प्रज्वलित होती रही।

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2582–046X
International Journal for Research in Applied History
Website: www.anshjournal.com

युद्ध से पूर्व का घटनाक्रम–

राजकुमार रतनसिंह ने बीकानेर पहुचतें ही अपने पिता महाराजा सूरतसिंह को जैसलमेर के विरूद्ध अनेक शिकायतें की, जिससे क्रुद्ध होकर सन् 1821 में बीकानेर ने जैसलमेर महारावल द्वारा मेवाड़ में राजकुमार के साथ अभद्र व्यवहार का बदला लेने के लिए हुक्मचन्द सुराणा कर रहे थे, इस आक्रमण से बारू ठाकुर जवानसिंह मारे गये।[34] बीकानेरी सेना भानीसिंह तथा अनाड़सिंह नाम के दो मालदेवोत भाटियों को पकड़कर ले गई। बीकानेरी सेना ने बारू व नोख के कुएं रेत डलवा कर बन्द कर दिये और बारू के गढ़ का सारा सामान जब्त कर लिया।[35] कर्नल टॉड भी इस तथ्य की पुष्टि करते हुए लिखते है कि "राठौड़ों ने बारू प्रदेश पर चढ़कर मनुष्य भक्षी राक्षसों की समान बारू प्रदेश के उक्त भट्टी जातीय आबाल वृद्ध वनिता प्रत्येक को मारकर गांव और नगरों को उजाड़ कर समस्त कूपों को बंद कराकर, गांव और नगर के पशुओं और धन को लूट लिया। जिन भट्टियों ने अपने सौभाग्य से राठौडों के हाथ से छुटकारा पाया वह मरू क्षैत्र के एक परम गुम स्थानों में जा छिपे थे। क्रमानुसार उनकी वहीं पर वंशवृद्धि हुई। पीछे जब जैसलमेर में ब्रिटिश गर्वनमेंट का अधिकार फैला उसी समय उक्त भाटीगण फिर साहस करके अपने छोडे हुए और नष्टभ्रष्ट हुए स्थान पर आकर बसने लगे, पीछे जब यह प्रसिद्ध हुआ कि प्रधानमंत्री सालिमसिंह इसमें भट्टियों पर कुपित हुए और उन्होनें देखा है कि उस बारू प्रदेश में मालदेवोत फिर से बसते है तो मालदेवोतों के प्रधान शत्रु बीकानेर के राठौड़ों की समान वह जल उठे और मालदेवतों को फिर ध्वंस करने की अभिलाषा से राठौडों को बुलाया। मालदेवोतगण दस्युवृति (चोरी) से अपना निर्वाह करते है, अतएव उनको दमन करना दूषित नहीं है, सालिमसिंह सहज में ही यह कह सकते थे किन्तु मूलबात तो यह है कि सालिमसिंह उस विचार से मालदेवोतों का नाश नहीं करना था।"

पाठकों को पहले ही ज्ञात हो चुका है कि नीच सालिमसिंह ने जिस समय संहार मूर्ति से विष के द्वारा और तलवार से जैसलमेर के बहुत से सामन्तों को मारा है, उस समय वह बारू प्रदेश के सामन्तों को भी उक्त हत्याकांड से मार चुका था। बारू के सामन्त राजकुमार रायसिंह के बडे अनुगत और रायसिंह की शक्ति के बढ़ने में सहायक थे, उसी से सालिमसिंह ने उनके जीवनरूपी दीपक को बुझा दिया। सालिमसिंह ने केवल उक्त सामन्तों को मारकर ही अपने कोप को दूर नहीं किया वरन बारू प्रदेश के प्रत्येक रहने वालों को भी वह शत्रु की दृष्टि से देखने लगा, किस भांति से वह बारू प्रदेश को एक साथ उजाड़ दे केवल यही चिंता उसके हृदय में रात दिन उठती रहती थी। उसकी वह इच्छा पूरी होने का यह एक सुयोग उपस्थित हो गया। बारू के मालदेवोतों ने गुप्तरीति से ब्रिटिश गर्वनमेंट का एक उपकार किया था, यह उपकार ही सालिमसिंह को आशा पूरी होने की साढी बन गया।"[36]

इसके बाद बीकानेरी सेना ने आगे की कार्यवाही रोक दी और जैसलमेर के मंत्री से बातचीत की लेकिन जैसलमेंर राज्य को यह सैन्य कार्यवाही अनुचित लगी और उन्होंने तुरन्त इस मामले को कर्नल टॉड को सूचित किया तथा उससे इसे अपने प्रभाव से सुलझाने को कहा।[37] बीकानेर महाराजा ने जैसलमेर क्षेत्र से अपनी सेनाओं को इस शर्त पर निकालने को सहमत हुए कि भविष्य में भाटी उसके राज्य में लूटपाट नहीं करें। जैसलमेर डॉ. हुक्मसिंह भाटी ने इस आक्रमण में मेहता सालिमसिंह का हाथ बताया है।[38] क्योंकि बारू के भाटियों ने राजकुवंर रायसिंह का पक्ष लिया था जिन्होने सालिमसिंह के पिता को भरे दरबार में मारा था इसी कारण बाद में बारू ठाकुर मेघसिंह को मेहता सालिमसिंह ने मरवाया था।[39] टॉड लिखते है कि सालिमसिंह के गुप्तभाव से बीकानेर के स्वामी मालदेवोतों को दमन करने लिये उतेजित न करने से वह कभी इतनी शीघ्र सेना लेकर मालदेवोतों पर चढाई नहीं करते। सालिमसिंह ने यद्यपि गुप्तरीति से बीकानेर के के स्वामी को उतेजित किया, किन्तु प्रकाश में वह संगम करने का प्रतिवाद ही करता रहा। सालिमसिंह ने विचारा था कि चतुराई से सहज में ही बीकानेर के स्वामी मालदेवोतों को

नष्ट कर देगें। किन्तु अंत में उसके विपरित फल हुआ, बीकानेर की प्रबल सेना ने शीघ्र ही मालदवोतों के सामन्त को मारकर ग्राम के सभी कूंए बंद कर दिये। वह लोग इस प्रकार से जीतकर अंत में बीकमपुर की ओर शीघ्रता से चले, और जैसलमेर की मुख्य भूमि पर रहने वाली प्रजा का महा अनिष्ट करने लगे। तब सालिमसिंह चैतन्य हुआ। मालदेवोंतों का नाश होते देख उसने देखा कि अब राज्य का सर्वनाश होना आरंभ हो गया। तब अपनी चतुरता को छोड़कर संधिपत्र को धारा के अनुसार अंग्रेजों की शरण में जाकर उसने सेना की सहायता मांगी। ब्रिटिश गर्वनमेंट ने संधिपत्र के नियमानुसार जैसलमेर पर आक्रमण करने वाले को अपनी सेना भेजकर हटा दिया। बीकानेर के स्वामी अंग्रेजी सेना से न लडकर अपनी राजधानी में लौट आये जिस लिये वह युद्ध में प्रवृत हुये थे, उसको पूर्ण हुआ देखकर फिर समरूपी आग को प्रज्ज्वलित करना आवश्यक नहीं समझा।[40]

यहां बीकानेरी सेना लम्बा व बड़ा युद्ध नहीं करना चाहती थी क्योंकि दो वर्ष पूर्व ही 1818 ई. में अग्रेजों से की गई संधि शर्तो का उल्लघंन होने का डर था। हरिसिंह भाटी का मत है कि महाराजा सूरतसिह काफी अनुभवी थे वे बारात में हुई मामूली तकरार को प्रतिष्ठा प्रश्न बनाकर जैसलमेर से युद्ध नहीं करना चाहते थें परन्तु राजकुमार की जिद पूरा करने के लिए जैसलमेर के बारू क्षेत्र पर सेना भेजी और हुक्मचन्द सुराणा को वहां से आगे नहीं जाने के आदेश दिए। इस दिखावें से राजकुमार रतनसिह संतुष्ट नहीं हुए, वह जैसलमेर पर भविष्य में बड़ा आक्रमण करनें के लिए बहाना चाहते थे। वे सुअवसर का इन्तजार करते रहे।[41]

युद्ध का तात्कालिक कारण–

1828 ई. में महाराजा सूरतसिंह का देहान्त होने पर रतनसिह बीकानेर के महाराजा बने।[42] उनके मन में बदले की आग अब भी धधक रही थी। रतनसिंह को बदला लेने का यह सुअवसर शीघ्र ही मिल गया।

जब मराठा पेशवा और ईस्ट इण्डिया कम्पनी के बीच युद्ध की स्थिति उत्पन्न होने पर पेशवा के प्रतिनिधि द्धारा जैसलमेर राजगढ ठिकाने के ठाकुर बिहारीदासोंत भाटी जोगीदासजी के पुत्र राजसिंह भाटी ने मराठा पेशवा के प्रतिनिधि से चार सौ ऊंटनियों की आपूर्ति की पेशकस (जिम्मेदारी) लिए ली। राजसिंह भाटी ने बिहारीदासोंत, मालदेवोत, तेजमालोत व उदयसिहोंत आदि भाटियों को ऊंटनियों का प्रबन्ध का कार्य सौंपा।[43] जैसलमेर री ख्यात में इस प्रकार लिखा है 'रावलजी का उमराव बिहारीदासोंत, उदयसिहोंत, तेजमालोत बारोटिया होकर बीकानेर रा राजा की सांढियां दागदार वगेरे दूजा देस की सांडीया 500 पांच सौ जोड सूं घेर लाया।[44] अर्थात इन सभी ने मिलकर बीकानेर राज्य में राजकीय ऊँटों के टोळे (समूह) को चुरा लिया और जैसलमेर राज्य की सीमा से पार ले गए। इस प्रकार महाराजा रतनसिंह ने जैसलमेर पर आक्रमण करने यह उपयुक्त अवसर देख कर एक शक्तिशाली 10,000 की सेना (ओझा के अनुसार 3,000 जबकि गजनप्रकाश के अनुसार 16,000) महाजन के ठाकुर बैरिसालसिंह, सुराणा हुकमसिंघ, अभयसिंह, अमरचन्द सुराणा आदि के नेतृत्व में भेजी।[45] उन्हें आदेश थे कि वह बीकानेर की ऊँटनियों को भाटियों से छीनकर वापिस लावें और जैसलमेर को उचित दण्ड दे ताकि वह ऐसी कार्यवाही भविष्य में नहीं करें। सूरतसिंह का असली उद्देश्य तो मेवाड़ में हुई मानहानि का बदला लेना था।[46] बीकानेर ने इस कृत्य की सूचना कंपनी सरकार के रेजीडेन्ट का भी प्रेषित कर दी।[47]

डॉ. हरिवल्लभ माहेश्वरी के अनुसार एक अन्य विवरण भी ज्ञात होता है कि जैसलमेर शासक महारावल गजसिंह के एक भाई तेजसिंह जो अपने को जैसलमेर गद्दी का उतराधिकारी मानता था, वह स्व. महारावल मूलराज के प्रपौत्रों में सबसे बडा था, जबकि गजसिंह तीसरे क्रमांक पर था, अतः राज्य परपंरा की दृष्टि से ज्येष्ठ पुत्र का अधिकार सर्वप्रथम माना जाता रहा था, इस हेतु उसने बीकानेर

से अपने हक को दिलाने में सहायता की याचना की थी। वह बीकानेर शासक का भानजा लगता था।[48] इसकी पुष्टि गजनप्रकाश से भी होती है कि मेहता सालिमसिंह ने वरिष्ठता का उल्लघंन कर महारावल मूलराज की जीवित अवस्था में ही राजगद्दी के 6 दावेदारों को छोड़कर महारावल मूलराज के 4 वर्षीय प्रपोत्र गजसिंह को उतराधिकारी बनाया।[49] ऐसा हो सकता है क्योंकि राजसिंहासन का वास्तविक उत्तराधिकारी होने के कारण राजकुमार तेजसिंह बीकानेर का सहयोग लेकर राजगद्दी प्राप्त करने की कोशिश करना असंभव नहीं लगता।

बीकानेर द्वारा प्रारम्भिक आक्रमण एवं लूटपाट– उदयपुर के अपमान का बदला लेने तथा भाटियों को सबक सिखाने के उद्देश्य से बीकानेर महाराजा रतनसिंह ने जैसलमेर पर आक्रमण करने एक शक्तिशाली महाजन के ठाकुर बैरिसालसिंह, सुराणा हुकमसिंह, अभयसिंह, अमरचन्द सुराणा[50] आदि के नेतृत्व में भेजी।[51]

बाप तालाब पर पड़ाव– बीकानेर से रवाना होकर बीकानेर सेना ने पहला पड़ाव बाप कस्बें के तालाब पर डाला। बड़ी संख्या में सैन्य दल देखकर बाप ठिकाने में नियुक्त जोधपुर के हाकम मेहता बीजमाल ने कोई प्रतिरोध नहीं किया लेकिन उसे यह पता चलने पर कि यह बीकानेर की सेना है और जैसलमेर पर आक्रमण करने जा रही है, तो तुरन्त उसने गुप्त रूप से एक पत्र हरकारा (प्रत्रवाहक) भेजकर महारावल गजसिंह को सूचित किया।[52] उस समय जैसलमेर महारावल गजसिह विदोही भाटी व सोढा सरदारों का पीछा करने हेतु हरसाणी (बाड़मेर) गये हुए थे, वहीं उन्हें बीकानेर की सेना द्वारा आक्रमण की सूचना मिली तो उन्होनें इस अनावश्यक युद्ध को टालने के लिए हरसाणी से ही अपने पुरोहित बिहारीमल (बिहारीदास) को संदेश देकर बीकानेर के सेनानायकों के पास भेजा।[53] और कहलवाया कि वह सेना को वापस ले जाए। वे सारी ऊँटनियों को लौटा देगें और दोषी व्यक्तियों से हर्जाना (क्षतिपूर्ति) भी दिलवाएगे।[54] पुरोहित बिहारीमल ने बहुत समझाया परन्तु बीकानेरी सेना का मूल उद्देश्य तो मेवाड़ में किये गए अपमान का बदला लेना था। इसलिए उन्होने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। महाजन के ठाकुर बैरिसालसिंह युद्ध करने के लिये अड़ा रहा। उसने कहा हम बदला लेंगे और अब तो गड़सीसर की पनघट का जेवर लूटकर ही सांस लेंगे।[55] मेवाड़ वाली घटना को 10 वर्ष होने को आए थे, मगर बीकानेर अभी भी बदला चुकाने की चाह कर रहा था। बीकानेर की सेना के साथ अबतावत, जोगावत, रामावत, मंडलावत, बीदाहरा (बीदा के पोत्र) नारायण हरा (नारायण के पोत्र) आदि खांप के राठौड़ो के योद्धा थे।[56]

पोकरण में पड़ाव– बाप से लूटापाट करती हूई यह सेना पोकरण पहूंची वहां उन्हें रसद और सहयोग मिला क्योंकि पोकरण के राठौड़ इनके स्वजातीय बंधु थे तथा 1653 ई. में रावल सबलसिंह द्वारा पोकरण महाराजा जसवन्तसिंह को सौंप दिए जाने के बाद जैसलमेर के भाटियों और पोकरण के राठौड़ों के बीच संबंध कभी तनावपूर्ण तो कभी सौहार्दपूर्ण रहते आए थे। पोकरण के ठाकुर उस समय भभूतसिंह थे।[57] वे उस समय तटस्थ बने हुए थे। रावल सूरतसिंह का तटस्थ रहने का कारण यह था जैसा कि हरगोविन्द व्यास ने लिखा है भाटी खेतसिहोत मेघसिंहजी की बहिन का विवाह संबंध पोकरण के तत्कालीन अधिपति के साथ हुआ था।[58] यह मेघसिंह बारू के ठिकाने के अभैसिंह के पुत्र थे।[59] इसका अर्थ यह हुआ कि पोकरण ठाकुर ने खुले तौर पर किसी का समर्थन नहीं किया होगा। परन्तु उनके द्वारा निष्पक्ष रहना नहीं लगता है क्योंकि गजनप्रकाश के अनुसार बीकानेरी सेना को पोकरण के दलपतसिंह व सूरजमल का साथ मिला।[60] लगता है वे सम्भवतः पोकरण ठाकुर के नजदीकी भाई बन्धु थे। इसका अर्थ यही कि हुआ ठाकुर भभूतसिंह की अंदरूनी सह बीकानर के साथ थी। इस प्रकार पोकरण वालों का सहयोग मिलने से राठौड़ सेना का हौंसला बढ़ गया और अब उसने जैसलमेर रियासत के क्षेत्र लूटपाट शुरू कर दी।

देवाकोट पर आक्रमण– सर्वप्रथम देवाकोट पर आक्रमण किया और लूटपाट की जिसमें जैसलमेर की और वहां नियुक्त सवाईसिंह भाटी व एक अन्य व्यक्ति काम आया।61 तत्पश्चात केलण भाटियो के एक गांव में लूटपाट की।

भोजका गांव पर आक्रमण–उसके बाद भोजका गांव पर आक्रमण कर शाकद्वीपीय बाह्मणों को लूटा।62 नन्दकिशोर शर्मा ने लिखा कि भोजका गांव में राठौड़ सेना ने शाकद्वीपीय ब्राहाणों के अमूल्य वस्तुएं और प्राचीन ग्रंथ आदि लूट–छीन लिया इसके विरोध में एक सती नामक स्त्री ने कटार से आत्मबलिदान दे दिया। उस दिन के बाद शाकद्वीपीय ब्राहाण बीकानेर का पानी भी नहीं पीते है।[63]

उधर जैसलमेर महारावल के आह्वान पर आस–पास क्षेत्र से आए योद्धाओं के समूहों को इन सभी को घड़सीसर तालाब के पास ठहराया। राज्य खर्च से इन सभी को खाना खिलाने के सेठों को बुलाया जिनमें स्वरूपसिंह मेहता, सेठ जोरावरमल व गंगण बनियों को भी बुलाया। 20000 योद्धाओं का सामान तोला गया।[64] हजुरियों को बुलाया कढाईयां चढ़ाकर सभी को भोजन कराया गया। महारावल गजसिंह स्वयं ईस्ट इंडिया कम्पनी द्वारा दिये हाथी पर बैठकर वहां गये और सबका स्वागत किया।[65]

बिहारीसर तालाब पर पड़ाव– यह तालाब बडोड़ा गांव में स्थित है। यह गांव पूर्व में एपिया भाटियों की जागीरी में था। एपिया भाटियों के द्वारा गांव छोड़कर जाने के बाद यह बिहारीदासोत भाटियों को मिला।[66] महारावल मूलराज को राजसिंहान से उतारने का दुस्साहस करने कारण बिहारीदासोत भाटियों यह गांव जब्त कर लिया था। जब बीकानेरी सेना इस गांव व तालाब पर पड़ाव डाला उस समय यह गांव सूना था।[67] तालाब पर बीकानेरी सेना ने डेरा डालने के बाद वहां पड़े गोर्वधन स्तम्भ को कुएं में पास डाल दिया जिससे कम जलस्तर वाले इस कुएं के जलस्तर में आशातीत वृद्धि हो गई।[68] चूंकि राजकीय ऊँटों के टोळे (समूह) को चुराने का दुस्साहस बिहारीदासोत भाटियों का ही था इसलिए बीकानेर के राठौड़ो का बिहारीदासोत भाटियों पर आक्रोश व गुस्सा इतना अधिक था कि तालाब के किनारे स्थित देवी के मंदिर की मूर्ति को भी कुएं में डाल दिया। यह मूर्ति खण्डित अवस्था में आज वहां देखी जा सकती है।[69]

जसुआ गांव में आग लगाना– बसुआ गांव में आग लगाई और लूटा व जनता के साथ मारपीट की।[70]

सांवला गांव में लूटपाट– तत्पश्चात सांवला गांव में लूटपाट की जसोड़ भाटियों ने पीछा किया।[71] यहां सांगोजी रावलोत ने पीछाकर लड़ाई करके धन लूटकर वापस लाया।[72]

काणोद पर हमला– काणोद पर बीकानेरी सेना ने हमला किया। भोमसिंह रावलोत ने बीका राठौड़ो को भगाकर कुछ धन वापस लिया।[73]

आसणीकोट पर हमला– फिर आसणीकोट (देवीकोट) पर हमला किया । आसणीकोट का वर्तमान नाम देवीकोट है। यहां पर राठौड़ी से सेना से भगूसिंह व भभूतसिंह ने युद्ध किया और लूटने नहीं दिया।[74]

बासणपी तालाब पर पड़ाव– बिहारीसर के बाद अंत में बासणपी तालाब पर शिविर लगाया।[75] जिसका कारण तालाब में पानी की उपलब्धता थी ताकि सेना, घोड़ो ऊंटो को जल संकट का सामना ना करना पड़े। यह बीकानेरी सेना का अंतिम पड़ाव था। यहां से अब उनका लक्ष्य जैसलमेर दुर्ग पर आक्रमण करना था।

जैसलमेर द्वारा समझौते के प्रयास– बीकानेरी सेना के आक्रमण की सूचना मिलते ही महारावल गजसिंह ने तुरन्त समझाइश व समझौते हेतु प्रयास शुरू कर दिए क्योंकि महारावल गजसिंह न तो युद्ध

करना चाहते थे और नहीं युद्ध के तैयार थे। वे हर हाल में युद्ध को टालना चाहते थे इसलिए उन्होंने युद्ध टालने व समझौते हेतु अंत तक प्रयास किया। इस हेतु उन्होंने निम्न 4 दूत मंडल बीकानेरी सेनानायको के पास भेजे।[76]

प्रथम बिहारीमल पुरोहित– आक्रमण की महारावल को हरसानी (बाड़मेर) में मिली। उन्होंने हरसाणी से ही अपने मंत्री पुरोहित बिहारीमल (बिहारीदास) को संदेश देकर बीकानेर के सेनानायकों के पास भेजा[77] और कहलवाया कि वह सेना को वापस ले जाए। वे सारी ऊँटनियों को लौटा देगें और दोषी व्यक्तियों से हर्जाना (क्षतिपूर्ति) भी दिलवाएगे।[78] इसलिए उन्होने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। महाजन के ठाकुर बैरिसालसिंह युद्ध करने के लिये अड़ा रहा। इस प्रकार समझाइश का यह पहला प्रयास असफल रहा।

द्वितीय राठौड गेनसिंह व मेघजी बारहठ– इस बार महारावल गजसिंह ने समझौते हेतु गेनसिंह राठौड़ व मेघजी बारहठ को भेजा परन्तु बीकानेर के सेनानायाकों के किसी प्रकार के समझौते से स्पष्ट इनकार कर दिया और कहा कि हम उदयपुर वाला वैर लेने आये है, लेकर ही जाएगे।[79] साथ ही बीका राठौड़ो ने कहा कि वीकमपुर बड़ी मिसल है जिसके राव खेतसिंह को इन्होंने कैद कर रखा है अब आपके पास है क्या ? जो हमारा मुकाबला करेंगे। उन्होंने बीकानरी से सेनानायको से वार्ता की परन्तु उन्होंने किसी प्रकार की बातचीत करने इनकार कर दिया।

तृतीय महारानी रूपकंवर के धाभाई उदयराज व जसराज–यह उदयपुरी महारानी रूपकंवर के धाभाई थे इन्हें उदयपुर से बुलाया गया था। इनके प्रयास भी निष्फल रहे ।[80] बीकानेर के सेनापतियों का अड़ियल रवैया बना रहा।

चतुर्थ राठौड गेनसिंह व मेघजी बारहठ– भोजका के शाकद्वीपीय बाह्मणों ने आकर महारावल से फरियाद की तब महारावल ने बातचीत करने व सन्धिवार्ता हेतु राठौड गेनसिंह व मेघजी बारहठ को भेजा लेकिन बीकानेरी सेना के सेनानायाकों ने कोई बातचीत व सन्धिवार्ता से इंनकार कर दिया।[81] एक बार फिर राठौड गेनसिंह व मेघजी बारहठ राठौड़ी सेनानायको से बातचीत करनें के लिए भेजे गये लेकिन कोई हल नहीं निकला। अंत में मल्लीनाथ के पोत्रौ (वंशजों) को बुलाया। इसका कारण यह हो सकता है कि राठौड़ राठौड़ भाई होने के उनका असर पड़ेगा। इस प्रकार महारावल का यह अंतिम प्रयास भी विफल रहा।

लगता यही है कि बीकानेर महाराजा रतनसिंह जैसलमेर को एक बार सबक सिखाने का अटल निर्णय कर चुके थे। इसलिए उन्होंने अपने सेनानायको का किसी प्रकार की सन्धि वार्ता या समझौता नहीं करने के स्पष्ट आदेश दे रखे थे। इस प्रकार महारावल गजसिंह के समझाइश व सन्धिवार्ता के सभी उपाय निष्फल रहे। अब उनके पास युद्ध के अलावा कोई चारा नही रहा।

जैसलमेर द्वारा युद्ध की तैयारियां– जब बीकानेर की सेना जैसलमेर के आमजन को लूट रही थी उस समय महारावल गजसिंह शान्ति प्रयासों के साथ युद्ध की तैयार भी कर रहे थे।

महारावल की आम बैठक– अब महारावल गजसिंह तात्कालिक परिस्थितियों पर विचार करने हेतु दुर्ग में जैसलमेर के स्थानीय वासियों की एक बैठक बुलाई जिसमें जगन्नाथ का पुत्र ईश्वरलाल आचार्य जिसे व्यास की पदवी दी गई थी। अपने भाई केसरीसिंह को बुलाया व देश दीवान उतमसिंह तथा सालिमसिह के पुत्र विशनसिंह को बुलाया। इसके अलावा जोगो मंत्री (जोधराज का पुत्र), ऊमजी भाटी (साहबदान का पुत्र), रामो हजूरी (रामजीदास), गजसिंह के धायमां के पुत्रभाई (जसराज के पुत्र, छोटमल छगांणी (जसदण

का पुत्र), खेता का पुत्र मावो, हजूरी मालो आदि सभी ने भाग लिया। महारावल ने सभी से सलाह की और राय जानी तब सभी ने एकराय होकर कहा कि अगर बीका नहीं मानते है, तो फौज इक्क्ठी कर मुकाबला किया जाए। रामो हजूरी (रामजीदास) ने कहा कि यह उदयपुर वाला वैर है।[82]

इस बीच बीकनेर की सेना तेजसिंह एवं पोकरण के ठाकुर की सहायता से लूटपाट करते हूए वासणपी नामक स्थल पर पहुंच गई जो राजधानी से मात्र पांच कोस दूरी पर था।[83] बीकानेरी सेना ने जैसलमेर की सीमा में घुसकर लूटपाट शुरू की दी और जैसलमेर की और अग्रसर होने लगी। महारावल गजसिंह अचानक हुए इस आक्रमण करने की स्थिति में नहीं थे तथा जैसलमेर के पास सुसंगठित सेना का भी अभाव था।[84] हरिदत व्यास आगे लिखते है कि "विजयाभिलाषिणी राठौड़ सेना पोकरण के अधिपति की सेना से सम्मिलित होकर भाटी राज्य को छिन्न–भिन्न करने की अभिलाषा से अप्रतिहत गति के साथ जैसलमेर की तरफ आने लगी।[85] इस मौके पर पोकरण नामक ठिकाने के राठौड ठाकुर ने भी अपनी ऊँटों की सेना बीकानेर की सेवा में प्रेषित कर दी थी। पोकरण सदैव से जोधपुर एवं जैसलमेर के मध्य विवाद का प्रश्न रहा था, पोकरण को भाटी प्रारंभ से अपने राज्य का हिस्सा मानते थे, जबकि वहां राठौडो का प्रभुत्व होने से वे जोधपुर के राठौड़ो को अपना शासक मानते थे।[86] पोकरण के शासक ने ऊँटो व तोपखानें की आपूर्ति की।[87]

इस आक्रमणकारी वृहतसेना को रोकने के लिये इस समय महारावल के पास सुसंगठित सेना का सर्वथा अभाव था। महारावल बड़े असमंजस की स्थिति में पड़ गये और उनकों कोई उपाय नहीं सूझ रहा था। उन्होंने बडी कठिनता से एक सहस्त्र वीर उतेजित राठौड़ सेना के प्रतिकार के लिए एकत्रित किये। महारावल के भेजे गये दूत का संधि प्रस्ताव ठुकराते हुए बीकानेर की सेना के आगे बढने की सूचना जब जैसलमेर पहुंची, तो महारावल ने अपने सभी सामन्तों से भी शीघ्रतिशीघ्र अपना सैन्य बल लेकर जैसलमेर पहुंचने की आज्ञा दी व स्वयं जैसलमेर में सैन्य तैयारी कर बहुत ही अल्प समय में दो हजार सवार और तीन हजार पैदल सैनिकों को जैसलमेर नगर में एकत्रित किया गया।[88]

महारावल ने अधिक सेना एकत्रित करने के अपने विश्वस्त संदेशवाहक के रूप में जामड़ा के सिसोदिया सरदारों को ठिकानों, गाँवों व सामन्तों, सगे–संबधियों तथा अन्य रिश्तेदारों से युद्ध सहायता और सहयोग हेतु भेजा तथा अन्य हरकारे दूरस्थ स्थानों पर भेजे गए।

इस समय जैसलमेर महारावल ने सिंध के मीर एवं हैदराबाद के शासकों को सहायता हेतु दो खरीते भेजे तथा बहावलपुर के नवाब के पास भी संदेश भेजा था, जिसमें बीकानेर के आक्रमण के विरूद्ध सहायता की याचना की गई थी।[89] इसका कारण यह था कि ठिकानों, गावों व सामन्तों, सगे–संबधियों तथा अन्य रिश्तेदारो से युद्ध में सहयोग का जो आह्वान किया गया था वे अभी तक पहुंचे नहीं थें, इसलिए पर्याप्त सेना के अभाव में सामना असंभव था। व्यास आगे लिखते है कि समस्त राज्य में स्वदेश रक्षा के लिए प्रत्येक शस्त्रधारी को आह्वान करने के लिए अपने अग्रंलिह दुर्गाप्रदसाद के अत्युच्च भाग में रखी हुई रणभेरी बजावाई। उस वृहत रणवाद्य के घोर शब्द से जैसलमेर पर विषम आपति आई समझ कर राजधानी से लगभग 18 कोस पर्यन्त दूरी पर रहने वाले समस्त भाटी सोढा और मुसलमान आदि वीर अपने–अपने शस्त्रों से सुसज्जित होकर महारावलजी की सेवा में उपस्थित हुए।[90]

संयोग से उसी समय सिंध क्षेत्र के थरपारकर के रतेकोट मठ के महंत श्री सहजनाथजी अपने अनुयायियों व सोढा सरदारों के साथ वैशाखी (जैसलमेर) की यात्रा पर आये हुये थें। महारावल गजसिंह ने वहां पहुँचकर महंत श्री सहजनाथजी का आशीर्वाद लिया और अपनी समस्या से अवगत करवाकर सहायता मांगी। तब महंत श्री ने आशीर्वाद देकर सोढा सरदारों को आदेश दिया कि आप सभी

महारावल की सहायता करो आपकी विजय होगी। तब साथ में आये सोढा सरदारों और करड़ा के ठाकुर सज्जनसिंह के पुत्र सबलसिंह रामसिंहोत सोढा व जामड़ा के सिसोदिया सरदारों को धाट से फौज–सिपाही लाने के लिए भेजा गया। सोढा सरदारों ने अपने पूर्वजों की परम्परा का अनुसरण करते हुए तथा महंत श्री सहजनाथजी महाराज के आदेश का पालन करने हेतु सभी सोढा सरदार अपनी–अपनी सैन्य टुकड़ियों व खोसो, राजड़ो, गजू और मीरों आदि मुस्लिम सेना की फौज के साथ जैसलमेर आये।[91] उक्त विवरण के सिद्ध होता है कि उस संकट की घड़ी में रियासत की प्रजा के प्रत्येक वर्ग ने सहयोग दिया। महारावल ने इन सभी घटनाक्रम की सूचना शिकायत पत्र के रूप में कंपनी सरकार के रजीमेंट को भी लिख भेजा था। देहली स्थित रजीमेंट ने महारावल को पत्र द्वारा सूचित किया गया कि वे अपहरण किये गये ऊंटों को तुरन्त लौटा दें, या उनका मूल्य अजमेर स्थित कंपनी के अधिकारी आर. केविन्डिश को सौंप दें, तथा बीकानेर राज्य की सेना द्वारा किये गये लूटपाट व राज्य को पहुंचे नुकसान को पूर्ण ब्यौरा पृथक रूप से बनाकर, अजमेर प्रषित करें। देहली रेजीडेन्ट द्वारा इसी समय एक पत्र बीकानेर के महाराजा रतनसिंह को लिखा जिसमें उन्हें मौके की गंभीरता को देखते हुए सेना भेजने से पूर्व कंपनी सरकार को विश्वास में न लेने हेतु शिकायत की गई थी,व कंपनी सरकार की नाराजगी जाहिर करते हुए उन्हें पड़ौसी राज्य की जनता पर युद्ध की लूटपाट एवं अत्याचार न करने की चेतावनी भी दी गई थी। देहली रेजीमेंट ने कुछ समय बाद तक तक स्थिति को सुलझते नहीं देखा तो उसने जैसलमेर के महारावल को पत्र लिखकर उन्हें सलाह दी कि उन्हें बीकानेर की आक्रान्ता सेना को अपने राज्य के बाहर निकालने का पूरा अधिकार है, किन्तु उनकी सेना का एक भी सैनिक बदले की भावना से बीकानेर सीमा में न घुसने पाये इसका पूरा पूरा ध्यान रखने हेतु भी सावधान किया गया था।[92]

जैसलमेर के सैन्यदल में उपस्थित योद्धा–

अंत में जब युद्ध के अलावा कोई चारा न देखकर महारावल गजसिंह ने जामड़ो सरदारों को सोढांण, खावड़, क्षेत्र में हरकारा भेजा वहां से सोढा, भाटी, खावड़िया, राड़, ऊनड़, खालत, खोखर, सिन्ध से राजड़, भंभरा, मंगलिया, ऊनड़, जंज आदि आये। मेहर जालमखांन जो बड़ा योद्धा था उदयसिंह पौत्रा भी आए। बाघसिंह व धनजी रामसिंहोत भाटी आए। सज्जनसिंह व हाथीसिंह बड़ी भुजाओं वालों थे, खीमसिंह जीवराजसिंह आदि बहुत आदमी लेकर आये। बिजमल के पौत्रा दलपत व बागजी, धाट का धणी खानजी सोढा (राम सोढा) बड़े हाथों वाला था।[93] सालमसिंह व धनजी रामसिंहोत भाटी आए। बड़गाम का रावतसिंह जो गंगासिंह का पौत्रा था। डुंगरसिंह व भोजसिंह दोनो बड़ी बड़ी भुजाओं वालों थे, हिगोंलदासोत सोढा आए। कल्याणपुर से हड़वतसिंह आया। रावतसिंह व भभूतसिंह भाटी आए, कोटड़ा से दानसिंह व भभूतसिंह राठौड़ आए तथा खालसा क्षेत्र के सिराई व बलोच आए। और जबकि उतमसिंह को जैसलमेर की सेना का सेनापति बनाया। बीकानेर की सेना में मंडलावत, अचलावत, पोढीआला[1] पोकरण वाले चम्पावत थे।[94]

युद्ध की तिथि–

जहां तक इस युद्ध की तिथि का प्रश्न है, तिथि के बारे में इतिहासकारों में मतभेद है। लक्ष्मीचन्द सेवग ने तवारीख जैसलमेर में इसका समय विक्रम संवत 1885 (सन् 1828 ई.) दिया है लेकिन तिथि या तारीख नहीं दी हैं। इसी आधार पर मांगीलाल व्यास, डॉ. हरिवल्लभ माहेश्वरी, तथा डॉ. हुक्मसिह भाटी, रिड़मलसिंह भाटी, गोपालसिह तेजमालता, रतनसिंह भाटी आदि भाटी इतिहासकारों ने भी इस युद्ध की तिथि ही विक्रम संवत 1885 (सन् 1828 ई.) ही मान्य की है। हरिसिंह भाटी पुगल का इतिहास में 1829 ई. लिखते है जो सही प्रतीत नहीं होती है।

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2582–046X
International Journal for Research in Applied History
Website: www.anshjournal.com

जबकि जगदीशसिंह गहलोत ने इस युद्ध की तिथि राजपुताने का इतिहास के पृष्ठ सं. 688 पर 6 अप्रेल 1834 ई. बताई है जो पूर्णतः गलत हैं।[95] रतनसिंह भाटी ने युद्ध की तिथि चैत्र सुदि ग्यारस दी है **गहराई से शोध करने पर इसकी पुष्टि महारावल गजसिंह के बारे में भाटीनामा में लिखे इस कवित से हो जाती है।**

अठारैसो पचयासि ये, मधुसुद इग्यारस जाण।
जीत नृपत गजसिंघरी, हार राठोड़ा हाण।।[96]

यह तिथि सत्यता की कसौटी पर खरी उतरती है।[97] अतः उपर्युक्त विश्लेषण से यह सिद्ध होता है कि यह युद्ध विक्रम संवत के चैत्र माह के तिथि सुदि ग्यारस को वर्ष 1885 में तद्नुसार सोमवार, 27 मार्च 1828 ई. को हुआ था।

युद्ध का स्थल–

यह युद्ध जैसलमेर मुख्यालय से उतर–पूर्व 21 किलोमीटर जैसलमेर–पोकरण मार्ग दूरी पर स्थित बासनपी नामक गांव के तालाब पर लड़ा गया था। वर्तमान में इस गांव को बासनपीर जूनी के नाम से जाना जाता है। परन्तु इस गांव का मूल नाम बासनपी ही है। इस गांव का नाम नैणसी की ख्यात में मिलता है।[98]यह गांव मूलतः पालीवाल ब्राहाणों का बसाया हुआ है।[99] पालीवाल इतिहास के लेखक पं. शिवनारायण पालीवाल ने यहां से विक्रम सवंत 1723, 1766, 1862, पुनद् व छिरक ग्रोत्र के पालीवाल ब्राहाणों के चबूतरे व विक्रम सवंत 1766 की छिरक जाति के हदूद मेघाणी की छतरी व विक्रम सवंत 1904 की रामचंद्र सोढा की छतरी का होने का उल्लेख किया है। जुगराफियों जैसलमेर में बासणपी के बारे में लिखा है कि जमीदार पालीवाल पट्टे लाठी वालां रे।[100] तवारीख जैसलमर में मूल दोनो गावं पलीवालों के है, लिखा है ओर राजश्री ईसरसिंहजी के पटे। 1823 ई. में पालीवाल इसे छोड़ कर चले गए थे, उसके बाद यह गांव लगभग पौने दो सौ सालो तक गैर आबाद रहा। 1965 के बाद आर्मी ने जब बालाना, अंजनयार, टावरकी और नवातला आदि गांव खाली करवाए तो वहां के निवासियों को दूसरे गांवो में बसाने हेतु पोकरण के पास जब 1974 ई. में चांदमारी क्षेत्र के लिए अन्य गांवों की जमीनें अधिग्रहित की गई उस समय अंजनयार, टावरकी और नवातला के विस्थापित लोगों ने इस विरान गांव को आबाद करने की जिला प्रशासन से मांग की। जिला प्रशासन ने विस्थापितों की यह मांग मान ली और उन गांवों से विस्थापित होकर आए लोगों को इस सूने गांव में बसा दिया।[101] अर्थात वर्तमान में बासणपी में रहने वाले मुस्लिम 1974 ई. में आकर बसे है। इन्हें बसाने में तत्कालीन जिला प्रमुख भोपालसिंह बडोड़ा गांव इसमें का बड़ा हाथ था।

मुख्य युद्ध एवं उसकी प्रमुख घटनाएं– हरिदत व्यास प्रंसगवश इस युद्ध का विस्तृत उल्लेख करते हुए आगे लिखते है कि राजधानी के अतिनिकट डेरा डाल कर पड़ी हुई राठौड़ से ना को देखकर चिन्ताग्रस्त महारावल ने झुझंला कर व्यासजी से पूछा कि न मालूम शुभमुहूर्त कब आवेगा। कल प्रातःकाल ही राजधानी का सर्वनाश होना चाहता है। व्यासजी श्रेष्ठ मुहूर्त देखने के लिये अपने चित को एकाग्र कर ही रहे थे कि इतने में ही उनको राजप्रसाद के गवाक्ष में से अधोभाग के चत्वर प्रदेश में दो काले सांप परस्पर लडते हुए दिखलाई दिये। वे उसी समय एक को अपने अक्ष को और दूसरे को विपक्ष का संकेतित करके उनकी लड़ाई देखने लगे। उनके देखते ही देखते विपक्षी विपधर आघातित होकर वहां से भाग गया। व्यासजी ने मुस्करा कर महारावलजी से कहा कि आप विजय अवश्यम्भावी है, आप इसी समय स्वसेना को शत्रुगण पर आक्रमण करने के लिये प्रेषित कीजिये। सेना प्रथम से ही सन्नध थी वह केवल महारावल के आज्ञा की प्रतीक्षा कर रही थी।[102]

युद्ध 27 मार्च की रात को सोई हुई बीकानेरी सेना पर भाटी सेना ने हमला कर दिया । शुरूवाती आक्रमण में तोपो के गोले व तीरों से जैसलमेर के कुछ आदमी मारे गये। हरावल में भाटी व सिराई थे

जो पीछे मुड़ने लगे और सेनापति उतमसिंह मेहता भी पीछे हटने लगा।[103] इतने में सोढा और राजड़ आ पहुंचे और उन्होंने आगे बढ़ना शुरू किया। थर की सेना के सेनापति रामचंद्र सोढा ने आह्वान किया कि हे क्षत्रिय वीरों डरों मत, आगे बढ़ो यह शुभ वेला बार–बार नहीं आने वाली है। आज मातृभूमि की लाज रखनी है, घर–परिवार और जीवन का त्याग करने से ही स्वर्ग मिलेगा।[104] यह कहकर वह हरावल में लड़ने लगा। इस आह्वान व अतिरिक्त सेना से भाटी सेना को संजीवनी मिल गई और वह रूक गई । अब पुनः दोनो पक्षों के योद्धा वीरतापूर्वक लड़ने लगे। युद्ध में जोधसिंह सोढा काम आया। गुल मोहमम्द (गबोल खां) मारा गया। मिठूखां के बन्दूक की गोली लगने से घायल हुआ परन्तु बच गया। बीकानेरी सेना का इद्रसिंह सुराणा मारा गया।[105] बीकानेर के बड़े बड़े 80 योद्धा मारे गये तथा 500 राजपूत काम आए। बीकानेर के कुल 2000 आदमी मारे गये। सेना में फूट पड़ गई। जैसलमेरी सेना उनके ऊंट व घोड़ें छीन लिए। महाजन का ठाकुर बैरिसालसिंह बीका की शादी भाटियों में हो रखी थी इसलिए भाटियों का जमाता होने के नाते भाटियों के प्रति उसकी सहानुभूति थी। अंत में बीकानेर की हार हुई।[106]

इस युद्ध का नायक सोढा रामचंद्र रहा जो बड़ी वीरता लड़ा जिसके प्रमाण में कवि ने में "गीत सोढा रामचंद्रसिंह रौ"[107] के में बीकानेरी सेना के आने का प्रयोजन सहित सोढा रामचंद्र का बहादूरी का वर्ण किया है कवि लिखता हैं कि –

सबल बीकांण जैसांण होय साबला,
आय बासणपुरी खेत अड़ीया ।
वैर उदियाण रो हुवो जद ब्यावरो,
भूप गज–रतनसी आय भिड़ीया ।।

हरिसिंह भाटी लिखते है कि बीकानेर की सेना लूटपाट और रक्तपात का अभियान चलाती हुई आराम से बासनपी गांव पहुंची और निश्चित होकर उसने रात्रि के लिए विश्राम करने हेतु डेरे डाले। अभी तक उसका सामना करने के लिए जैसलमेर की सेना से नहीं हुआ था।[108] विजयोन्मत राठौड़ सेनापति ने समझा कि हमारा सामना करने के लिए अब कोई भी भाटी वीर उपस्थित नहीं हुआ है। ऐसा विचार कर समस्त राठौड सेना आनंद पूर्वक रात्रि के समय वहीं सो गई।[109] भाटियों ने अपने निपुण जासूसों से बीकानेर की सेना की शक्ति, उसके हथियारों सुरक्षा व्यवस्था और पड़ाव की चौकसी के बारें में पूरी जानकारी प्राप्त कर ली।[110]

व्यासजी द्वारा शुभमुहूर्त बताते ही महारावल की आज्ञा प्राप्त करके सिंध क्षेत्र में थरपारकर के लखियाला गांव से आए रामसिंहोत सोढा ठाकुर अजोजी के पौत्र जोगीदास के पुत्र रामचन्द्रसिंह के नेतृत्व में सोढा राजपूतों की सेना[111] और खोसों के जमींदार साहबखां ने अपने पुत्र और पांच सौ वीर सैनिको के साथ अर्द्धरात्रि के समय सुनिद्रित राठौड़ सेना के बीच घुसकर उस पर भयंकर आक्रमण किया और भाटी सामन्तों ने अपने–अपने दल के साथ उक्त को चारों तरफ से घेर लिया।[112] हरावल में रहकर सोढा रामचन्द्र मे डेढ़ गुना जोश आ गया।और घोड़े पर सवार शत्रुओं के दल को मार कर भगाने लगा [113]

भयो जद रामचंद हारोली भाग मां,
सिंह ज्युं अरि पर चढ़यो सोढ़ो ।
भेळीयो अस्व चढ़ केवि दल भाजवां,
दुणीयर तेजसु हुवो डोढ़ो ।।

सहसा अपने चारों तरफ शत्रुगण के रणवाद्य की गंभीर ध्वनि को सुनकर प्रसुप्त राठौड़ों ने उसी समय शस्त्र धारण किया। उस अन्धतम परिपूर्ण अर्द्धरात्रि में अद्धोनिद्र राठौड़ शत्रु भ्रम से परस्पर तीव्र प्रहार करने लगे, ज्योंहि जरा जरासा प्रकाश होने लगा जो राठौड सेनापति को मालूम होने लगा कि उसके योद्धा भ्रमवंश आपस में ही कटकट कर मर रहे है सेनापति ने उनको शस्त्र प्रहार बंद करने का आदेश दिया परन्तु राठौड सेना के बीच में घुसा हुआ वीर साहब खां संहारमूर्ति धारण करके राठौड़ सेना को नष्ट भ्रष्ट करने लगा।[114] हरावल में नियुक्त सोढा रामचन्द की टुकड़ी ने बहादूरी से मुकाबला किया और शत्रु सेना के कई शूरवीरों को स्वर्गलोक पहुंचाते हुए वह रणभूमि में अपने साथियों को आह्वान करता कि हे क्षत्रिय वीरों डरों मत, आगे बढ़ो यह शुभ वेला बार–बार नहीं आने वाली है। आज मातृभूमि की लाज रखनी है, घर–परिवार और जीवन का त्याग करने से ही स्वर्ग मिलेगा।[115]

रामचंद वाकारे डरो मत क्षत्रीयां,
अै वेला जुद्ध री नहीं आसी ।
लाज रखणा कज आय सांमा लड़े,
वणे धर जीव तज सरगवासी।।

सोढा रामचन्द्र शत्रु दल को इस तरह उछालता जैसे घास के पूळे फैंका जा रहा हो और उनके सिर पर बिजली कड़क रही हो तथा राठौड़ सेना को प्राण बचाने के लिए कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था। कवि के शब्दों में–

आय सांमा भिड़े पूलो ज्युं आछटे,
केवीयां सीस ज्युं बिज कड़की।
जोध बीकांण रा पड़या जंजाळ मां,
खेत छोडां नहीं मिले खड़की ।।[116]

राव अर्जुनदानजी ने अपनी पुस्तक मठ ख्याला में सोढा रामचन्द्रसिंह सोढा के शरीर पर 120 घाव लगने तथा सिर कटने के बाद भी लड़ने का उल्लेख किया है। उक्त विवरण में कुछ अतिश्योक्ति भी हो सकती है परन्तु इससे प्रमाणित होता है कि रामचन्द्रसिंह ने युद्ध में बहुत ही शौर्य पराक्रम दिखाया तथा दुश्मनों के दांत खटे कर दिये और अंत में महान योद्धा बीकानेरी सिपाहियों से घिर गया और वीरतापूर्वक लड़ते हुए अपने प्राण न्यौछावर कर दिये।[117] कवि ने भी इसके पुष्टि–प्रमाण में लिखा है कि–

इक बीस घाव लग रामचंद अंग मां,
अमरपुरी जाण रो दिन ऊगो ।
पंगी जल चाड़ नवकोट परमार रा,
पंचोतर अरी ले सरग पूगो ।।[118]

कविवर संग्रामसिंह सोढा सचियापुरा ने अपनी रचना ''सो धरती सोढांण'' में सोढा रामचन्द्रसिंह के बारे में लिखते है कि

सोढा कुळ में सूरमौ, जूझ्यौ रामौ जाण।

वासणपी ली वीरता, साख भरै सोढाण।।[119]

सोढा रामचन्द्र ने इस कहावत को चिरतार्थ कर दिया कि रणस्थल में मर जाना पर मरण के भय से रणविमुख न होना अर्थात '**मरणों पण हटणो नहीं, आ रण खेत री रीत**', यह अनादि काल से रजपूती परम्परा रही हैं।

साहब खां के पांस सौ वीर सैनिकों के तीक्ष्ण प्रहारों के आघातों से विताड़ित राठौड सेना भयत्रस्त होकर चारों तरफ भागने लगी। परन्तु इस नवीन प्रदेश के प्रस्तरमय विषम मार्ग से अपरिचित होने के कारणवत थोड़ी दूरी पर घेरा डाले हुए भाटी सरदारों के तीक्ष्ण तलवारों का शिकार होने लगी। इस प्रकार साहब खां के प्रथम आक्रमण से ही राठौड सेना का प्रधान संचालक अमरचंद सुराणा पांच सौ वीरों के साथ वापस बासणपीर के विकट रणक्षैत्र में मारा गया।[120] खोसो के जमीदार साहब खां का पुत्र मीठूखां घायल हुआ। मीठूखां ऊनड़–वीरतापूर्वक लड़ा, राठौड़ सेना को सोढ़ा, भाटी व मुस्लिम यौद्धाओं का संयुक्त मुकाबला करना पड़ा उनकी सेना चारों ओर से घिर गई।

चारों तरफ अपने सैनिक गणों की अगणित लाशें देखकर राठौड सेना छिन्न भिन्न होकर भाग गई। विजय भाटियों ने रणोन्मत होकर उनका पीछा किया।[121] तवारीख जैसलमेर में लिखा है कि भाटियों ने इतना जोरदार आक्रमण किया की बीकानेर की सेना को अपना माल असबाब छोड़कर भागना पड़ा। बीकानेर का नगाड़ा व निशान भाटियों के हाथ लगा।[122] लेकिन दयालदास ने अपनी ख्यात में लिखा है कि बीकानेर का नगाड़ा छिन जाता, परन्तु एक सिक्ख ने अपने प्राणों की आहुति देकर उसकी रक्षा की।[123]

पराजित होकर राठौड़ी सेना लाठी पहुंची। प्रातः पोकरण से दलपतसिंह व सुरजमल आए ओर उन्होंने कहा कि हमें ले जाते तो मरकर भी जैसलमेर को जीतने नहीं देते। जब जैसलमेर की विजयी सेना को यह पता चला कि पोकरण वालों का बहुत घमंड है तो निश्चय किया कि अब पूरी फौज लेकर पोकरण का घेराव करों ओर आने दो उनकी रजपूती देखते है।[124]

पोकरण से झगड़ा और युद्ध– अब पोकरण पर हमला करने के लिए पेमसिंह का पोत्र व भाण का पुत्र जालमसिंह, बहादूरसिंह का पुत्र शेरसिंह, बनेसिंह व गजसिंह जो हरदानसिंह के पुत्र थे। धनराज का पुत्र सवाईसिंह, सरदारसिंह का पुत्र रावतसिंह और जसोड़ बस्तोजी आदि 200 योद्धा पोकरण का पशुधन लेकर आये।[125] इतने में बीकानेरी सेना भी पोकरण पहुंच गई। जैसलमेर की सेना का डेरा कानरी तालाब पर था। पशुओं की चोरी होने व पशुपालकों की फरियाद पर पोकरण से दलपतसिंह व सुरजमल से सेना लेकर आये अब राठौड़ो व यदुवंशियो के बीच युद्ध होने लगा। खेतसिंह व ओनाड़सिंह रावलोत योद्धा थे। सुजानसिंह का पुत्र सांगसिंह भी था। उतमसिंह ने भी तलवार चलाई। जोधसिंह जो सिहड़ार के स्वरूपसिंह का पुत्र था। राजसिंह व रूघसिंह दोनो पिता पुत्र जो रामसिंहोत भाटी थे। जगोजी, लालजी, जुझारसिंह व सुमेलसिंह बहादूरी से लड़े। साहबदान सोढा खुहड़ी, भारेखान खोसा, साहबखान खोसा जो मिठूखांन का पुत्र था। गुलशेर कन्धारी, करणेखां, हुसैन कन्धारी, सुमेलसिंह व गेनसिंह भाटी, भभूतसिंह महाबली था जिसमें हाथी के समान बल था जो भीम के समान लड़ा। गबोलखां जो बड़ा जमींदार था युद्ध में मारा गया। महाराणा भीमसिंह ने नागा साधुओं की फौज भेजी जो निशान मठ के पास रहती थी जिसे बाद में भू के पास जोगा गांव इनायत किया गया था।[126] वे इस युद्ध में लड़ते है। पोकरण वालों की हार हुई ओर वे भाग गये। उनके कई घोड़ व ऊंट भाटी सेना के हाथ लगे। उनकी ओर का उदयसिंह चांपावत मारा गया। व बाकी चांपावत राठौड भागकर पोकरण गढ़ में घुस गये। इस प्रकार दूसरी बार भी महारावल गजसिंह की विजय हुई।[127]

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2582–046X
International Journal for Research in Applied History
Website: www.anshjournal.com

युद्ध विराम– भागती हुई राठौड़ी सेना का जैसलमेरी सेना ने पीछा किया। इतने में उदयपुर से मंत्री आया तथा महाराणा भीमसिंह के राजकुमार जवानसिंह व पातलसिंह, विशनसिंह, गुणेशसिंह आया इन सभी ने युद्ध बंद करवाया। जैसलमेर वाले अब लाठी गांव आ गये थे मेवाड़ वालों ने लाठी गांव में दोनो पक्षों बीच समझौता करवाया।[128] बीकानेर के सेनापति बैरिसालसिंह बीका व सुराणा अभयसिंह ने क्षमा मांगी और कहा कि आप बड़े हो, गिनायत हो, हमें वापस जाने दो। बीकानेर भविष्य में इस बात को लेकर कोई झगड़ा नहीं करेगा। यह सूचना महारावल गजसिंह को एक हरकारे के साथ पत्र द्वारा दी गई तो महारावल ने कहा कि महाराणा के वार्ताकार व आदमी जो तय करे वह हमें मंजूर है। इस हेतु उन्होंने मेहता उतमसिंह को भी पत्र भेजा । नगारा बजाती हुई जैसलमेर की विजयी सेना वापस लौट आई। पोकरण के ठाकुर को जैसलमेर महारावल को नजराना भेंट करना पड़ा।[129] मां स्वागियां की कृपा से पश्चिम के पातशाह गजसिंह की विजय हुई।

विजयी साहब खां की वीरता से अत्यन्त प्रसन्न होकर महारावल गजसिह ने साहब खां खोसा को नकारे के साथ पालकी पर बैठकर जैसलमेर के परमपुनित अति प्राचीन दुर्ग में बेरोकटोक चले आने का अति महत्वपूर्ण सम्मान प्रदान किया।[130] इसी समय खोसा साहबखां को नगराजा गांव इनायत किया गया था जिसके वंशज आज भी वहां रहते है।[131]

अब युद्ध के समाचार समस्त राज्य में अच्छी तरह फैल गये इससे सिंध प्रान्त की सीमा पर्यन्त रहने वाले समस्त भाटी तथा महारावल के भक्त यवन भी दिन प्रतिदिन राठौड़ सेना का पीछा करने वाली भाटी सेना में आकर सम्मिलित होने लगे इससे भाटी सेना की संख्या में आशातीत वृद्धि हो गई। इस प्रकार इस परिवर्तित भाटी सेना ने अपने राज्य की सीमा से थोड़े ही दिनों में समस्त शत्रुगण को निकाल कर पोकरण प्रदेश पर आक्रमण किया गया। विजयोन्मत भाटी सेना ने अल्प समय में ही समस्त पोकरण प्रदेश को विध्वंस्त कर दिया। परन्तु भाटी खेतसिहोत मेघसिंहजी की बहिन का विवाह संबंध पोकरण के तत्कालीन अधिपति के साथ हुआ था। मेघसिंहजी ने अपनी बहिन के कहलाने से उक्त दुर्ग से भाटी सेना को लौटा दी। शत्रुगण के भाग जाने पर वापिस लौटती हुई, भाटी सेना ने बीकानेर और पोकरण के बीच थाट गांव को लूट लिया।[132] बीकानेरी सेना ने भागते समय अपनी तोपे भी छोड़कर गयी जो आज भी जैसलमेर दुर्ग में रखी हुई है।[133]

जैसलमेर के प्रमुख योद्धा–

इस युद्ध में जैसा कि पहले जा चुका है कि महारावल के आह्वान पर समस्त रियासत से योद्धा उपस्थित हुए थे और महारावल के द्धारा सहायता के अनुरोध पर रताकोट मठ के महंत श्री सहजनाथजी के आदेश पर सोढांण से भी सोढा राजपूत योद्धाओं ने भी भाग लिया। जैसलमेर, बीकानेर और अन्य तवारीखों तथा पुस्तकों की गहन छानबीन करने और स्थानीय जानकारों से सर्वे–साक्षात्कार द्धारा इस युद्ध में भाग लेने वालों के निम्न नाम मिलते है। यथा–

1. **सोढा रामचन्द्रसिंह जोगीदासोत**–

(लखियाला गांव, मीरपुर जिला–सिन्ध) व उनके साथ 130 सोढा यौद्धाओं की सैन्य टुकड़ी के साथ– अप्रितम शौर्य प्रदर्शन और बहादूरी से लड़ते काम आए। महारावल गजसिंह ने रामचन्द्रसिंह सोढा की यादगार में बासनपी में छतरी बनाकर प्रतिष्ठा करवाई।[134] *पालीवाल इतिहास के लेखक पं. शिवनारायण पालीवाल ने पालीवाल इतिहास लेखन हेतु जब पालीवालों के गांवो का दौरा व सर्वेक्षण किया तब वे 1934 ई. में बासणपी आये थे उन्हें यहां पर 4 चबूतरे व दो छतरियां मिली उनमें एक छतरी रामचंद्र सोढा की थी। पं. शिवनारायण पालीवाल ने उस समय छतरी पर उत्कीर्ण शिलालेख की नकल थी जो गणपत पालीवाल द्वारा संपादित पालीवाल विरासत संकलन पुस्तक के पृष्ठ सं. 127 पर इस प्रकार दी गई है।*

श्री अभिप्तिार्थ सिद्धर्थ पूजितो सुरैरपि सिर्व विघ्न छिदे तस्मै गणाधिपतयेनमः अथस्मत सुभ सवत्सरे वीर विक्रमाजीत राज संवत १६०४ मिति वर्षे कातिक मासे सुकल पक्षे तिथौ १५ सोमवारे ग्राम वासणपी उरी तलाई माथे छतरी कराई हजर सोढे राम साथे करावी रामचंद मदा फोतः बीकानेर री फोज आई जद काम आया।[135]

उक्त शिलालेख के अनुसार छतरी का निर्माण विक्रम संवत 1904 ईस्वी (सन 1847) में करवाया गया था। जबकि राव अर्जुनदानजी की बही के अनुसार यह महारावल गजसिंह ने छतरी 1892 ईस्वी (सन 1835)में बनवाई । कवि ने "गीत सोढा रामचंद्रसिह रौ" उनके अप्रितम शौर्य प्रदर्शन, वीरता और पराक्रम का वर्णन करते हुए सिर कटने के बाद भी लड़ने का उल्लेख किया है। जिसकी पुष्टि राव अर्जुनदानजी की बही में लिखे विवरण से इस प्रकार होती है कि ***""श्री जैसलमेर दरबार महाराजा श्री 1008 गजसिहजी ने रामचन्द्रजी मदद दीनी आपरा आदमी 130 साथ ले युद्ध कियो। गांव बासणपी उपर सामे फौज बीकानेर दरबार री आई हुती इणमे सोढा रामचन्द्रजी जुंझार हुआ सात बीस घाव लागा सिर उतरे बाद 8 पौर लड़ता रहया गुली छंटाई जद लाश गोडी वाली 21 पंडाण हाथ सूं दीना देवनामी जुंझार रामचन्द्रजी हुआ। श्री दरबार गजसिह री जीत हुई बीका राठौड़ पोकरण भागा । संवत 1892 में दरबार गजसिंहजी ने छतरी चढाई गांव बासणपी माथे । चौतरड़ो हवेली आगे संवत 1896 में महाराजा श्री गजसिंहजी रे हाथ सूं कराया सोढा राम रामचन्द्रजी जुंझार हुआ । जैसलमेर रियासत में जोगीदासजी रा ने घरू खेता रा हासल माफ कीना लखियाले गांव री बात।""***[136] युद्ध के बाद रामचन्द्रसिंह सोढा के भाई बन्धु सोढा सरदार सबलसिंह प्रतापसिंहोत आदि उनके शव को लेकर लखियाला गांव चले गये। सोढा रामचन्द्रसिंह जोगीदासोत का विवाह भिड़कमल भाटी दलपतसिंह अगरसिहोंत की पुत्री रूपकंवर से हुआ था। उनके वंशज आज सीतोड़ाई व भीयासर गांव में रहते है जो भारत विभाजन व उसके बाद हुए भारत पाक युद्धो के दौरान उत्पन्न परिस्थितियों के कारण जैसलमेर में आकर बसे।[137]

2.<u>भाटी जोगराजसिंह</u> – यह झिझनियाली के ठाकुर जोरावरसिंह का पौत्र व जालमसिंह का पुत्र था।[138] युद्ध में पराक्रम दिखाया, उन्हें कूण्डा और निबंली गांव जागीर में मिले।[139]

3.<u>भाटी राजसिंह</u>.– यह राजगढ के बिहारीदासोंत भाटी जोगीदासजी के पुत्र थे[140], मुख्य रूप से बीकानेर से ऊंटनियां इन्होनें ही चुराई थी[141], राजगढ गांव का नाम इन्ही के नाम पर पड़ा है। युद्ध में इनकी क्या भूमिका रही, विवरण नहीं मिलता। भाटी राजसिंह का विवाह डाहली के विजयराव सोढा किसनसिंह की पुत्री से हुआ था। राजगढ के उनके वंशज अजयपालसिंह भाटी के माध्यम से भाटी राजसिंह के कुछ दोहे मिले है जिसमें उनके द्वारा बीकानेर की राजकीय ऊंटनियां लाने व उनकी बहादूरी की जानकारी मिलती है। यह कवि लोंगु द्वारा रचित है। शायद वह उनका परम्परागत गायक ढोली (दमामी) था। दोहो का शाब्दिक व मात्रिक शुद्धिकरण मित्र महेद्रसिंह सिसोदिया छायण द्वारा किया गया। जो इस प्रकार है।[142]

उंडी नीव अथाग, सह कूंगरा है सिरै।
गढ़ खरौ बळ खाग, रहसी गढ़ अवचल राजसी।। 1 ।।

वरग तिहारौ वाल, भिळियो धौंसे बीकपुर
सांयढ तणी सुगाळ, रूप तणे बळ राजसी।। 2 ।।

राजो म्हाजौं महिपति, जोध सुतन घण जांण।
अमर आज इल ऊपरां, कर दीनौ किरतार।। 3 ।।

चंगा तुरही चढण नै, सोहै वीरां साथ।
ओ जो राजो आवियौ, मांडण भड़ भाराथ।। 4 ।।

कवि लोंगु सुजस कथियौ, भळकियौ जस भांण ।
प्रसल राजल पाड़िया, जल चाढ़ै जैसाण ।। 5 ।।

4.साहबखां खोसा– वीरतापूर्वक लड़ा, लड़ते हुए जब किसी ने पुत्र मिठूखां के घायल होने की सूचना देकर उसे सभालनें को कहा तो उतर दिया "ऐसे हंगामें में कई मिठू फुटेगे। " बेटे की तरफ ध्यान न देकर वह वीर लगातार लड़ता रहा।[143] इसी समय खोसा साहबखां को नगराजा गांव इनायत किया गया था जिसके वंशज आज भी वहां रहते है।

5मिठूखां–साहबखां खोसा का पुत्र, बहादूरी से लड़ा, गोली लगने से घायल हुआ।[144] बाद में मंडाई में मृत्यु।

6.**भाटी जोधसिंह सिहड़ार**– यह स्वरूपसिह के पुत्र थे, स्वरूपसिह की हत्या मेहता सालिमसिह ने करवाई थी। जोधसिंह के पुत्र पृथ्वीसिंह को सिहड़ार गांव बसाने को दिया गया था।[145] **जैसलमेर री ख्यात भी इसकी पुष्टि करती है।[146]**

7.**मिठूखां ऊनड़**– वीरतापूर्वक लड़ा, ऊनड़ो की हवेली इनायत हुई। यह समा मुसलमान थे। तनोट माता की पूजा करते थे और इनकी वेशभूषा व कुछ रीति–रिवाज हिन्दुओं जैसे थे। 1965 के भारत पाक युद्ध दौरान इनका वंशज अंतरखां तनोट का सरपंच था। जब जिले के 11 मुस्लिम पंचायतों के सभी मुस्लिम पाकिस्तान जाने लगे तो उनके साथ यह लोग भी पाकिस्तान चल गए।[147] धातव्य है कि समा मुसलमान मूलतः यदुवंशी क्षत्रिय है। यदुवंशी राजा बालद के पुत्र समा के कुछ वंशज मुसलमान बने। इन ऊनड़ मुसलमानो ने महारावल मूलराज को पुनः राजगद्दी बिठाने में ममद की थी।[148]

8. **गबोल खां सिराई– गबोलखां जो बड़ा जमींदार था युद्ध में मारा गया।**[149] यह संभवत थर से आई सोढा सेना के साथ आया था।

9. **सोढा सज्जनसिंह करड़ा** –युद्ध में अतिमहत्वपूर्ण योगदान रहा। इनके वंशज वर्तमान में गांव करड़ा में रहते है। गौरतलब है कि सज्जनसिंह करड़ा ने मेहता सालिमसिंह द्वारा राजकुवंर रायसिंह और उनके कुवरों की हत्या के बाद अन्य राजकुमारों (तेजसिंह, देवीसिंह, केशरसिंह, छत्रसिंह आदि) को उसके प्रकोप से बचाने के लिए गुप्त रूप से जैसलमेर से सुरक्षित निकाल कर नाचना पहुंचाया था फिर वहां से राजकुमारों को बीकानेर ले जाया गया। इसी कारण महारावल मूलराज द्वितीय द्वारा सज्जनसिह को करड़ा हवेली इनायत की गई थी। लेकिन बाद में सालिमसिंह मेहता ने हवेली को जब्त कर लिया। 1828 ई. के इस युद्ध में विशिष्ट सेवा के बदले में महारावल गजसिंह ने ठाकुर सज्जनसिंह को करड़ा हवेली पुनः बहाल कर दी जो आज भी उनके वंशजों के अधिकार में है।[150]

10. **सोढा जोधसिंह लूणार**–यह सुरताणसिह के पुत्र थे। वीरतापूर्वक लड़े, कवि साहिबदान रतनू सिरूआ ने गजनप्रकाश में लिखा है कि–जोधसिंह व सज्जनसिंह दोनो जोड़ी बनाकर लड़े और शत्रु सेना के दांत खट्टे कर दिये तथा जोधसिंह इस युद्ध में बहादूरी से लड़ते हुए काम आये थे।[151]

जोड़े रण सज्जन जोध जवान, महाघड़ सोढ़ लगो असमान ।
मलप गयो गजने मंयद, चढ़ै रमदांत पछाड़ ही चंद।।
हंसे अरि थण्ड, देखाय डेही हाथ, रामाहर सोढ़ पड़ै भारथ

जो गावत वारग ना वर जोध, अमरापुरी गयो जल चाड़ै औ.....

जोधसिह के पौत्र मडूजी (मदनसिह) ने गांव लूणार बसाया। मडूजी (मदनसिह) के पौत्र ठा. सोहनसिह की पुत्री लक्ष्मीकुंवर का विवाह 1907 ई में महारावल जवाहरसिह से हुआ था जिनके पाटवी कुंवर महाराजकुमार गिरधरसिह हुए।[152]

11. **सोढा सबलसिंह प्रतापसिंहोत** (लखियाला,गांव सिन्ध)– युद्ध में उल्लेखनीय सेवा के बदले कोई इनाम मांगने पर गेडीछुट की इच्छा जताई तब महारावल गजसिंह ने इन्हे गेडीछुट (लाठी मारने की छूट) दी थी। इसके अनुसार उनके वंशजो द्वारा किसी प्रयोजन से किसी को लाठी मारने से घायल या मरने पर भी राज–दरबार या कोर्ट–कचहरी में सुनवाई तक नहीं नहीं होती थी। इनके वंशज वर्तमान में गांव बींजराज का तला में रहते है।[153]

12. **भाटी बाघसिंह –** यह गेहूं (बईया) खेतसिह के पुत्र थे।[154] युद्ध में क्या भूमिका रही विवरण नहीं मिलता।

13. **भाटी भभूतसिंह चेलक**– यह सवाईसिह के पुत्र थे।[155] गजन प्रकाश के अनुसार भभूतसिंह महाबली था जिसमें हाथी के समान बल था जो भीम के समान लड़ा। इनके पिता सवाईसिहजी ने चेलक बसाया था।

14. **सोढा सबलसिंह करड़ा**– यह सज्जनसिंह करड़ा के पुत्र थे। धाट–पारकर क्षेत्र से अपनें भाईयों सोढा राजपूतों व राजड़, गज्जू आदि मुस्लिम सेना को लाने का कार्य इनके पुत्र सबलसिंह सज्जनसिंहोत द्वारा ही किया गया था।[156]

15. **सोढा साहबदानसिह खुहड़ी**–यह सोढा दौलतसिह के पौत्र और हाथीसिह के पुत्र थे। जब बिहारीदासोंत व अन्य भाटियों ने महारावल मूलराज द्वितीय(1762–1819 ई.) को राजसिंहासन से उतारकर कैद किया, तब राजकुवंर रायसिह को राजसिहांसन पर बिठाने का प्रयास हुआ और फिर उनको वापस राजगद्दी पर बिठाने में भाटी जोरावरसिंह जिजनियाली, मेघसिंह बारू आदि भाटी सरदारों को सोढ़ा दौलतसिंह ने बड़ा सहयोग किया था इसी उपकार के बदले मूलराज द्वितीय ने 1785 ई. में मूलपसा भाटी जीधेंजी का गांव खुहड़ी सोढ़ा दौलतसिंह को जागीर में दिया गया था।[157] और महारावल मूलराज द्वितीय के पुनः राजसिंहासन पर बैठने के बाद बिहारीदासोंत भाटियों के दमन के लिए सेना हाथीसिह सोढा के नेतृत्व में ही बडोड़ा गांव भेजी गई थी जिसने गांव स्थित गढ़ी और मकान ढ़हा दिए।[158] तत्पश्चात महारावल गजसिंह के समय किसी बात से नाराज होकर मेहता सालिमसिंह ने उन्हें जहर दे दिया था जिससे उनकी मृत्यु हो गई। उनका दाह संस्कार खाभा गांव में हुआ था लेकिन उनकी पाग के साथ उनकी सौतेली माता खुहड़ी में सती हुए।[159] कवि साहिबदान रतनू सिरूआ ने इस युद्व में साहबदानजी गंगदासोंत के बड़े सहयोग का उल्लेख करते हुए लिखा है कि

दौलत हरौ साहबदान, महिपत गजन राखै मान।
साहबदान खुहड़ी, सुधे हिगोंल रा सब सोढ़ समान।।[160]

16. **रावलोत खेतसिंह**–गांव व युद्ध में योगदान की जानकारी नहीं मिली।[161]

17. **भिड़कमल समेलसिंह**–यह सोनू गांव के निवासी थे, युद्ध में योगदान की जानकारी नहीं मिली।[162]

18. **भाटी जोधसिंह तेजमालोत**– यह तेजमालोत भाटियों में से थे तेजमालोत भाटी रणधा, मोढा व तेजमालता गांवो रहते है। युद्ध में योगदान की जानकारी नहीं मिली।[163]

19. **सिराई हाजीखां** – काम आया[164]

20. **सोढा खानजी – यह सोढा किस खांप व गांव का था पता नहीं चला।**

21.**रामो हजूरी (रामजीराम हजूरी)**–यह महारावल मूलराज की पड़दायत खुशहाली का पुत्र था जिसे ठाकर की पदवी दी गई थी। यह महारावल मूलराज का निजी संरक्षक व विशेष सलाहकार था। राजकीय कार्यो में महारावल उसकी सलाह के बिना कोई काम नही करते थे इस कारण लोग इन्हें महारावल का खास मर्जीदान कहते थे। इसके बारें में यह कहावत प्रचलित थी" जहां सू राजी रामजी वहां सू राजी मूलराजी"।[165]

जैसलमेर राज्य में हजूरी पदवी सर्वप्रथम रामजीदास को मिली थी उसके पुत्र खेतसिंह को भी कंवर की पदवी दी गई थी। यह अजमेर में जैसलमेर राज्य की और से वि.सं. 1888–1899 तक मुख्य कांउसिल व सलाहकार (वकील) रहा।[166] जैसलमेर में हजूरी दफ्तर का प्रथम अफसर रामजीराम था।[167] रामजीराम बाद में महारावल गजसिंह के समय महत्वपूर्ण पदों पर था।

22. उदयराज व जसराज– यह महारावल गजसिंह की उदयपुरी रानी स्वरूपकंवर के धाभाई थे जो उनके साथ उदयपुर से आये थे। इन्होनें घड़सीसर तालाब पर एकलिंगनाथ मंदिर व पाठशाला बनवाई तथा गजरूपेश्वर महादेव मंदिर भी बनवाया। आराशिवर मंदिर भी बनवाया।[168]

23. ईश्वरलाल आचार्य– यह जगन्नाथ का पुत्र था। पुष्टिकर (पुष्करणा) जाति से था जिसे महारावल गजसिंह ने राजनीति निपुण के कारण प्रधान अमात्य नियुक्त किया था। उसने अंग्रेजी सरकार के साथ जैसलमेर के मधुर संबंध स्थापित करने और सीमा विवाद के झगड़े निपटाने में विशेष सहयोग दिया था। उसकी स्वामिभक्ति व निष्ठा से प्रसन्न होकर उसे व्यास की पदवी से अलंकृत किया गया था।[169]

24. मेहता विशनसिंह– यह मेहता सालिमसिंह का पुत्र था। बड़े भाई हिम्मत सिंह के बाद उसे महारावल गजसिंह ने जैसलमेर राज्य का दीवान नियुक्त किया था और हिम्मतसिंह के साथ मिलकर शासन प्रबंध करने का आदेश दिया था। बाद में हत्या के आरोप में महारावल ने उसे बंदी बना लिया। लेकिन वह अवसर पाकर जैल से भाग गया।[170] उसका अनुज हिम्मत सिंह भी व्यापार के सिलसिले में विदिशा (मध्यप्रदेश) चला गया।[171] जिसके वंशज आज भी वहां रहते है।

25.मेहता उत्तमसिंह– यह सालमसिंह के तीसरे पुत्र लक्ष्मणसिंह का पुत्र था जो अपने बड़े पिता (हिम्मतसिंह के) गोद आया था।[172] मेहता हिम्मतसिंह व मेहता विशनसिंह के पदच्युति के बाद उसे उत्तमसिंह का दीवान बनाया गया। यह बासणपी युद्ध में जैसलमेर की सेना का सेनापति था।

26. सेठ जोरावरलमल – यह बाफना (पटवा) गोत्र का ओसवाल महाजन (बनिया) था। पटवा हवेली के निर्माता गुमानचंद पटवा का चौथा पुत्र था। उसके पुर्वजों का मूल स्थान जैसलमेर था। वैसे यह मूलतः जैसलमेर के भाटी रावल मालदेव की पीढ़ी से गंगण बनियों का निकास है जो कालान्तर में ओसवाल बन गये थे। सेठ जोरावरमल ने व्यापार में अच्छी उन्नति कर कई बड़े–बड़ें शहरों में दुकाने कायम की और बड़ी सम्पति प्राप्त की। कर्नल टॉड की सलाह पर उसे मेंवाड़ राज्य का आर्थिक प्रबंध सौंपा था। महाराणा भीमसिंह ने उसे परासोली गावं इनायत किया और सेठ की उपाधि दी थी। जैसलमेर महारावल गजसिंह ने भी 1834 ई. में संघवी सेठ की उपाधि दी थी।[173] बासणपी युद्ध समाप्ति के बाद दोनो पक्षों में समझाइस व सन्धिवार्ताकार यही था। कर्नल टॉड को राजस्थान का इतिहास लिखते समय जैसलमेर रियासत की अधिकांश जानकारी इसके द्वारा ही उपलब्ध करवाई गयी थी।

27. खेतसिंह– यह हजूरी रामजीराम का पुत्र था जिसे कंवर की पदवी थी[174]

28. राव खेतसिंह– यह बीकमपुर के राव शिवजीसिंह के कुंवर थे। जब महारावल मूलराज के समय बीकमपुर राव ने बीकानेर के महाराजा गजसिंह का पक्ष लिया तब बीकमपुर को खालसा घोषित कर दिया गया था। बाद में शिवजीसिंह ने बीकानेर के महाराजा गजसिंह की मदद से बीकमपुर आक्रमण कर दिया तो महारावल गजसिंह ने उसके पुत्र खेतसिंह को कैद कर जेल में डाल दिया था। बासणपी युद्ध के समय यह जैसलमेर की कैद में था। संभवतः इस युद्ध में सहायता के उपलक्ष में उसे रिहा कर दिया गया हो।

29. भाटी धनसिंह– यह भाडली गांव के उम्मेदसिंह के का पुत्र था।[175]

30. भाटी सवाईसिंह–यह नवातला के भावसिंह का पुत्र था जो बीकानेरी सेना के देवाकोट पर आक्रमण करने पर लड़ता हुआ काम आया।[176]

31. भाटी भानीसिंह (भगवानसिंह)–यह बारू के रतनसिंह का पुत्र था।[177]

32. भाटी भंवरसिंह (भावसिंह)– नवातला के खीमजी का पुत्र था।[178]

33. भाटी वभूतसिंह–यह चेलक के सवाईसिंह का पुत्र था।[179]
34. भाटी भभूतसिंह व भागूसिंह–यह काणोद के स्वरूपसिंह के पुत्र थे।[180]
35. भाटी भीमसिंह–यह बाघजी का पुत्र का था जो खारिया गांव के थे।[181]
36. बिहारीमल पुरोहित–सिद्ध देवराज की सहायता करने वाले देवायत पुरोहित की 12वी पीढ़ी में प्रहलादजी हुए। प्रहलादजी के पौत्र सांरगधर के पुत्र गोपाजी से गोपा पुरोहित खांप चली। गोपाजी की 8वी पीढ़ी में बालजी हुए जिन्हें महारावल अखेसिंह ने पाट पुरोहित स्थापित कर महारावलों के राज्याभिषेक का अधिकार दिया था। बालजी का प्रपौत्र बिहारीमल पुरोहित था।[182] बिहारीमल पुरोहित बासणपी युद्ध में मुख्य सन्धि वार्ताकार यही था। धातव्य है कि जैसलमेर के महारावलों के राज्याभिषेक का अधिकार पूर्व में देवायत पुरोहित के वंशज श्रीपत पुरोहित (जगाणी) करतें थे जब महारावल बुधसिंह अल्पायु में मृत्यु हो गई तब दिवगंत महारावल के चाचा तेजसिंह ने श्रीपत पुरोहितों व अन्य प्रभावशाली सांमतो के सहयोग से अपने पुत्र सवाईसिंह को गोद लेकर उतराधिकारी बनाया उस नव महरावल का तिलक परम्परानुसार जगाणी पुरोहित आसकरण ने किया था। उधर स्वर्गीय महारावल बुधसिंह के भाई अखेसिंह को तेजसिंह द्वारा इस प्रकार राजगद्दी पर अधिकार करना अनुचित लगा। तब अखेसिंह द्वारा कुछ सांमतों को पक्ष में करने के बाद जगाणी पुरोहितों को साथ देने का दबाव बनाया व परेशान किया पर नहीं मानने पर श्रीपत पुरोहित तुलसीदास को डाबला गांव में तथा घड़ीसर तालाब पर तेजसिंह को मरवाया ओर राजमहलो में दासी के माध्यम से नाबालिग महारावल सवाईसिंह को जहर देका मरवाया। इस प्रकार अखेसिंह द्वारा राजसिंहासन कर अनाधिकृत कब्जा करने श्रीपत पुरोहितों (जगाणियों) ने राज्याभिषेक करने से इनकार कर दिया इस पर महारावल अखेसिंह ने राज्याभिषेक का अधिकार श्रीपत पुरोहितों (जगाणियों) के स्थान पर गोपा पुरोहितों को पाट पुरोहित का अधिकार दिया और उस महारावल अखेसिंह का राजतिलक बिहारीमल पुरोहित के परदादा बालजी ने ही किया था। तब से आज तक जैसलमेर के महारावलों के राज्याभिषेक गोपा पुरोहित करते है।[183]
37. उदयसिंह चांपावत– यह पोकरण का राठौड़ था। लाठी गांव के पास दूसरी झड़प में मारा गया।

अन्य नाम जो मिलते है–गुलाम मोहम्मद मंगलियो ,खोसो कासमखां, बादरखां बरोच, शकीलखां[184] आदि। अन्य सैकड़ो–हजारों योद्धा होगें पर जानकारी के अभाव में यहाँ उनका विवरण देना संभव नहीं हैं।

नोट–अमरचन्द सुराणा व हुकमचंद सुराणा के मारे जाने के भ्रम का निराकरण– बासणपी युद्ध में बीकानेर की सेना का कौनसा बड़ा अधिकारी मारा गया इस पर इतिहाकारों में मतभेद है। जहां हरिसिंह भाटी, डॉ. हरिवल्लभ माहेश्वरी, भाटी रतनसिंह, और नन्दकिशोर शर्मा आदि इस युद्ध में बीकानेर की सेना के सेनाध्यक्ष अमरचन्द सुराणा के मारे जाने का उल्लेख करते है वहीं हरिसिह भाटी तो ओर आगे लिखते कि "कुछ वर्षो बाद उनके पुत्रों ने बासनपी में उनके मारे जाने के स्थान पर एक छतरी का निर्माण करवाया। वह आज भी उस त्रासदी की मूक गवाह के रूप में बासनपी में खड़ी है। वैसे लोग समय व्यतीत होने के साथ बासनपी के युद्ध को भूल जाते, परन्तु यह छतरी उनकी उत्सकता को जाग्रत करती है और बीकानेर उस शर्मनाक पराजय की याद करके सिर झुका लेता हैं।"[185] जबकि जैसलमेर री ख्यात में सुराणा हुकमचंद के मारे जाने का लिखा है।[186] लेकिन यह दोनो तथ्य असत्य है क्योंकि यह है कि अमरचन्द सुराणा को तो इस युद्व से 14 वर्ष पहले 1814 ई. में ही बीकानेर महाराजा सूरतसिंह ने सरदारों के झुठे षडयंत्र व बहकावें में आकर मरवा दिया था, तो उसके इस युद्व में भाग लेने का सवाल ही नहीं उठता।[187] अमरचन्द सुराणा के वंशज आज भी बीकानेर में रहते है। मैंने उनसे व्यक्तिगत सम्पर्क कर जानकारी ली

तो उनके 7वें वंशज अरविन्दजी सुराणा ने भी उपर्युक्त तथ्य को असत्य करार दिया।[188] वहीं भाटी गोपालसिंह ने सुराणा हुक्मचन्द के मारे जाने का उल्लेख किया जो भी असत्य है क्योंकि सुराणा हुक्मचन्द इस युद्व के बाद भी महाराजा रतनसिंह के कई सैन्य अभियानों में भाग लेता हुआ दिखाई देता है।[189] अर्थात वह इस युद्ध के बाद 1839 ई. तक जीवित था। तवारीख जैसलमेर में सूराणा नम्बर दो के मारे जाने का उल्लेख है परन्तु किसी का नाम नहीं दिया गया है।

इस प्रकार इस युद्ध में न तो सुराणा अमरचंद मारा गया और न ही सुराणा हुकमचंद। अब यह सवाल उठता है कि इस युद्ध में कोनसा सेनापति या उच्चाधिकारी मारा गया इसकी पुष्टि गजनप्रकाश से होती है जिसमें इद्रसिह सुराणा के मारे जाने का उल्लेख है।[190] अतः अब यह तो प्रमाणित हो जाता है कि बासणपी युद्ध में बीकानेरी सेना के सेनानायकों में इन्द्रसिंह सुराणा ही मारा गया था। अब एक प्रश्न यह भी शेष रह जाता कि क्या बासणपी में इन्द्रसिंह सुराणा के वंशजो ने उसकी छतरी का निर्माण करवाया था जैसा कि हरीसिंह भाटी ने लिखा है। इसकी तहकीकात के लिए हमें पालीवालों के इतिहास की लौटना पड़ेगा। चूंकि यह हम जान चुके है कि बासणपी गांव पालीवाल ब्रहाणों का बसाया हुआ है और यहां पर पुनद् व छिरक गोत्र के पालीवाल रहते थे जिसकी पुष्टि पालीवालों के इतिहास से होती है।

1934 ई. में पालीवालों के इतिहास के लेखक पं. शिवनारायण पालीवाल ने पालीवालों के इतिहास लेखन हेतु जब वे शिलालेखों के संग्रह के लिए वे बासणपी गांव दौराकर सर्वेक्षण किया तब उन्होंने बासणपी गांव के तालाब पर में दो छतरियां व व गांव में तीन चबुतरों होने का उल्लेख किया है जिसमें एक छतरी तो विक्रम सवंत 1904 की रामचंद्र सोढा की छतरी तथा दूसरी विक्रम सवंत 1766 की छिरक जाति के हदूद मेघाणी की छतरी का शिलालेख सहित उल्लेख किया है।[191] इसके अलावा किसी छतरी का उन्होंने जिक्र नहीं किया है। इस प्रकार यह प्रमाणित हो जाता है कि बासणपी तालाब की पाल पर जो दो छतरियां थी उनमें एक छतरी रामचंद्र सोढा की जो राजकीय विद्यालय के मुख्य द्वार सामने की तरफ तालाब के आगौर में व छिरक जाति के पालीवाल हदूद मेघाणी की छतरी जो तालाब की पाल पर स्थित थी। दोनो छतरियों को 25 जनवरी 2020 को असामाजिक तत्वों द्वारा तोड़कर गिरा दिया गया है।[192] अगर तालाब परिसर में तीसरी छतरी होती तो उसका उल्लेख या उसके शिलालेख का वर्णन पं. शिवनारायण पालीवाल अवश्य ही करते जबकि उनके विवरण से उक्त दो छतरियों के अलावा किसी तीसरी छतरी होने के कोई प्रमाण नहीं मिलता है। इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि बासणपी तालाब पर बीकानेरी सेना सेनापति अमरचन्द सुराणा व हुकमचंद सुराणा का कोई स्मारक या छतरी नहीं है । यह केवल हरिसिंह भाटी के दिमाग की कल्पना मात्र है।

राठौड़ी सेना की पराजय के कारण– इस युद्ध में बासनपी युद्ध में बीकानेर की बहुत बुरी हार हुई। वह अभिमान व गर्व के साथ आये थे उसी तरह बड़ी जिल्लत व तौहीन के साथ वापस लौटना पड़ा। जहां तक इस युद्ध में राठौड़ी सेना के पराजय का सवाल है तो उसके कई कारण प्रतीत होते है यथा

1. अत्यधिक घमण्ड व अभिमानी होना।
2. जैसलमेर की सैन्यशक्ति का गलत आंकलन करना।
3. रात्रि में अंधेरे में दिग्भ्रमित होना।
4. बैरिसाल बीका की सहानुभुति जैसलमेर के साथ होना
5. युद्ध की बजाय लूट प्रवृति को प्राथमिकता देना।

परिणाम–

जहां तक इस युद्ध के परिणाम का सवाल है दोनो पक्षों की जन व धन हानि हुई और बासनपी युद्ध में बीकानेरी सेना की बहुत बुरी तरह पराजय हुई। तवारीख जैसलमेर में मां स्वागियां के अदीठ चक्र से बीकनेर के 500 योद्धाओं के मारे जाने का उल्लेख है जबकि डॉ. हरिवल्लभ माहेश्वरी ने बीकानेर के 700 सैनिकों के मारे जाने का उल्लेख किया है। तवारीख जैसलमेर में लिखा है कि भाटियों की सेना ने जोरदार आक्रमण किया की बीकानेर की सेना को अपना माल असबाब छोड़कर भागना पड़ा। बीकानेर का नगाड़ा व निशान भाटियों के हाथ लगा। बीकानेरी सेना ने भागते समय अपनी तोपे भी छोड़कर गयी जो आज भी जैसलमेर दुर्ग में रखी हुई है।[193]

बासनपी की यह पराजय बीकानेर वासियों के लिए दृष्टांत बन गई। जब कभी भी बीकानेर के दो आदमी आपस में लड़ते या झगड़ते तो कमजोर पक्ष कहता "थे इता ज शूरवीर हो तो बासनपी वाले वक्त लारे कठै रह गिया हा। " [194] कवियों ने भी इस घटना को अछुता नहीं छोड़ा। किसी कवि ने लिखा है कि

जाता जुगां न जावसी, आसी के दिन याद।

भड़कमधां नहीं भुलसी, बासनपी को वाद।।[195]

अर्थात "युगों युगों तक बासनपी के युद्ध को विस्मृत नहीं किया जायेगा, राठौड़ रणबांकुरों को कई दिनों तक यह याद रहेगा।"

बीकानेरी का बासनपी के युद्ध को विस्मृत नहीं होने के संबंध में यह दोहा भी लोक जगत में प्रचलित है।

मेह न भूलै मेदनी, रूद्र न भूले राण।

पली न भूले पाडकी, बासणपी बीकाण।।[196]

अर्थात जिस प्रकार वर्षा कभी धरती को भूल नहीं सकती, रंक कभी राजा को भूल नहीं सकता, पाडकी (भैंस की बच्ची) पली (एक गांव) को भूल नहीं सकती, उसी बीकानेर वाले कभी बासणपी का युद्ध भूल नहीं सकते।

इसी संबंध में मुसलमानों में भी प्रचलित एक कहावत है।

बीका पड़ गया फीका।
लागी झीकम झीका।।[197]

इस हार के उपरांत बीकानेर व पोकरण के शासकों ने अपनी बची सेना को अपने–अपने राज्य सीमा में वापिस बुला लिया तथा फिर कभी जैसलमेर की और निगाह उठाने का साहस नहीं किया।

समझौता–

बीकानेर का यह आक्रमण अंग्रेज सरकार के साथ 1818 ई. की गई संधि की पांचवी धारा के विरूद्ध होने से अन्त में अंग्रेज सरकार ने इसमें हस्तक्षेप किया और उदयपुर के महाराणा जवानसिह को मध्यस्थ बनाकर दोनो राज्यों में सुलह करवा दी। महाराणा स्वंय तो न गया, परन्तु उसने अपने विश्वासपात्र सेठ जोरावरमल को इस काम के लिए भेज दिया, जिसने दोनो राजाओं तथा अंग्रेज अफसरों से मिलकर परस्पर हर्जाना दिलाने की शर्त पर उनमें मेल कराने की व्यवस्था की।[198] डॉ. हरिवल्लभ माहेश्वरी लिखते है कि इन्हीं तत्कालीन तेजी से घट रहे राजनैतिक परिवर्तनों के कारण कंपनी दोनों

राज्यों को हर संभव अपने प्रभाव में रखना चाहती थी। प्रथम कंपनी ने उदयपुर के महाराणा की मध्यस्थता से दोनों शासकों में संधि कराने का प्रयास किया, क्योंकि दोनों ही शासकों की रानियां उदयपुर महाराणा की पुत्रियां थी। महाराणा संधि कराने में सफल हो गये, लेकिन यह समझौता दोनों राज्यों के मनोमालिन्य को स्थायी रूप से दूर नहीं कर सका व दोनों राज्यों के मध्य सीमा विषयक छुटपुट झगड़े व हक के दावे–प्रतिदावे चलते रहे।[199]

इसी क्रम में बीकानेर महारावल ने जैसलमेर राज्य के गणगौर पूजन महोत्सव के दौरान राजकीय गणगौर के ईसर (शिव भगवान का रूप) को उठवा दिया अर्थात बीकानेर वाले लूटकर ले गये इसलिए *उसके बाद से जैसलमेर रियासत में बिना ईसर की सवारी की गणगौर यात्रा निकलती है। यहाँ कि गणगौर अकेली पूजी जाती है,उनके पति ईसर नहीं। तब से माता गवर अकेली रह गई। भारतीय संस्कृति में स्त्रियां दूसरा विवाह नहीं करती इसलिये डेढ़ सौ वर्षो से गवर अपने ईसर की प्रतीक्षा कर रही है।* [200] यह दस्तूर आज तक जारी है। हालांकि डॉ. हुकमसिंह भाटी ने अपनी पुस्तक 'भाटी वंश का गौरवमय इतिहास' भाग–1 के पृष्ठ सं. 411 में सर्वेक्षण से प्राप्त जानकारी का संदर्भ देते हुए मोढा गांव के भाटी दौलतसिह व केशवदास के द्वारा बीकानेर से अपृहित ईसर को पुनः लाने व उपलक्ष्य में मोढा और नवातला की जागीर प्राप्त करने का उल्लेख किया है।[201] परन्तु सही प्रतीत नहीं होता क्योंकि अगर ईसर वापस लायी गई थी आज भी *जैसलमेर में बिना ईसर की सवारी की गणगौर यात्रा की परम्परा का पालन क्यों किया जा रहा हैं।* यह भी एक विचारणीय प्रश्न है। हां, भी यह हो सकता है कि वे बीकानेर के किसी दुर्ग के किवाड़ और तुलाट लूट लाये हो जिसका उल्लेख रिड़मलसिंह भाटी जिजनियाली ने किया है।[202]

सम्मेलन एवं स्थायी संधि–

शर्मनाक हार व उसकी वापसी पर जैसलमेर सेना का पीछा कर उसे बुरी तरह आंकित किये जाने के कारण दोनों राज्यों के शासकों के मन में एक दूसरे के प्रति दुर्भावना ग्रस्त होने के कारण आगे भी युद्ध के बादल कभी भी मंडरा सकते थे, द्वितीय ईस्ट इंडिया कंपनी ने दोनों राज्यों के साथ हुई संधियों में यह स्पष्ट रूपेण दावा किया था, कि वह दोनों राज्यों को किसी भी बाहरी आक्रमण के समय प्रत्यक्ष रूपेण सैनिक सहायता प्रदान कर उनके राज्य की रक्षा करेगें, किन्तु उक्त युद्ध में दिल्ली स्थित रेजीमेंट व अजमेर में उनका दूत, मात्र पत्रों द्वारा दोनों राज्यों को युद्ध करने से रोकने के अलावा कुछ न कर सके थे। यह जैसलमेर शासक गजसिंह का आत्मबल या आत्म विश्वास था कि वह अपनी अनियमित एवं अप्रशिक्षित सैन्य बल के साथ वासणपीर में बीकानेर सेना पर सैन्य सूझबूझ के साथ चीते की तरह झपट पडा व हारी हुई बाजी को जीत में बदल दिया अन्यथा बीकानेर, जैसलमेर की राजधानी को छोड संपूर्ण भू भाग तो विजित कर चुका था। यदि जैसलमेर शासक ईस्ट इंडिया कंपनी की सैन्य सहायता पर निर्भर रहता तो 1829 में ही जैसलमेर राज्य का इतिहास पूर्ण हो जाता। अतः ऐसी स्थिति में कंपनी पुनः दोनों राज्यों को अपने विश्वास में पुनः लेना चाहती थी। जैसलमेर का महत्व इस समय उसके लिये सिंध में प्रवेश पाने एवं उस पर अधिकार कर मुलतान के रास्ते पंजाब के महाराजा रणजीसिंह के सिंध मुल्तान पर बढते दबाव को रोकने भी था। इसके अतिरिक्त ईरान के रास्ते रूस एवं फ्रांस के सैन्य बल के प्रवेश की आशंका से भी कंपनी आतंकित थी, अतः वह सिंध से आगे भी बलूचिस्तान एवं अफगानिस्तान तक अपनी सीमाओं को सुरक्षित करने में अपने साम्राज्य का हित देखती थी।[203] अतः इन राज्यों के मध्य उत्पन्न समस्याओं का स्थायी हल निकालने के लिए अंग्रेजी सरकार को सक्रिय होना पड़ा। एच. डब्ल्यू गर्वनर जनरल के एजेंट के सहायक ट्राविलियन को दोनो शासको के बीच एक व्यक्गित सामंजस्य लाने के लिए नियुक्त किया था। इस पर ट्राविलियन ने पहले बीकानेर व जैसलमेर का दौरा किया और संबधित

शासकों के साथ चर्चा की। लेफ्टिनेंट बोइलो द्वारा उनकी सहायता की गई।[204] अतः दोनो राजाओं में परस्पर मिलाप, सीमा विषयक विवाद का अंत करने और मनोमालिन्य को दूर करने के लिए दोनो राज्यों की सीमा पर एक स्नेह सम्मेलन का आयोजन अंग्रेजी सरकार द्वारा किया गया।[205] अन्ततः कंपनी ने प्रत्यक्ष रूपेण इस विषय में भाग लेने हेतु लेफ्टिनेंट बोइलो को नियुक्त किया। लेफ्टिनेंट बोइलो को यह दायित्व सौंपा गया था कि इन दोनों राज्यों के मध्य उत्पन्न समस्याओं का स्थाई हल निकालने के साथ–साथ, सीमा विवाद अंत करने व दोनों राज्यों के मध्य परस्पर सम्मेलन कर दोनों के मनों में एक दूसरें के प्रति दुर्भावना भी सदैव लिये समाप्त कर देवें। लेफ्टिनेंट बोइलो एक अति समझदार एवं सूझ बूझ वाला अंग्रेज था, वह भारत में कंपनी सरकार की सेना में मात्र युद्ध ही करना सीखा था वरन उसने राजपूत राजाओं के मन मस्तिष्क के विचार भावों का भी सूक्ष्मता से अध्ययन किया हुआ था। बाइलों ने अपने इस प्रयास का बड़ा ही सजीव वर्णन अपनी डायरी में किया था जो इस प्रकार है।[206]

''बीकानेर और जैसलमेर के राजाओं का अपनी–अपनी सीमा के घड़ियाला और गिरराजसर गांवों मे ता. 09 मई ई. 1835 (वि.सं. 1892 वैशाख सुदि12) को उनका आगमन निश्चित हुआ था, अतः उस दिन में भी घड़ियाला जा पहुँचा, परन्तु वहां यह मालूम होने पर कि बाकानेर के महाराजा के आने में अभी एक दिन की देर है मैं गिरराजसर चला गया। घड़ियाला बीकानेर की सुदूरवर्ती पश्चिमी सीमा पर बसा हुआ एक गांव है, जिसमें 130 घरों की बस्ती और एक छोटा सा किला है। महारावल के ठहरने के लिए चुना हुआ गांव गिरराजसर घड़ियाला से बड़ा है और उसमें तीन सौ से अधिक घर और किला है। वहां पहुंचने पर मैं पुनः लेफ्टिनेंट ट्राविलियन से मिला, जो महारावल को दसवीं तारीख को वहां लाने में सफल हुआ। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, वही दिन दोनों राजाओं के पारस्परिक मिलाप के लिये नियत हुआ था, परन्तु उनके थके हुए होने के कारण यह कार्य दो दिन के लिए स्थगित कर दिया गया। ता. 12 मई को दोनों राज्यों की सीमा के ऊपर दौलतखाना (दरबार के लिए बड़ा शामियाना) खड़ा करने का प्रबंध हुआ। उस स्थान पर सौ फिट लंबी और चौबीस फिट चौड़ी जगह में दोनों ओर बराबर–बराबर भूमि में खेमे खड़े किये गये। मुलाकात के लिए नियत स्थान के दक्षिणी भाग में लेफ्टिनेंट ट्राविलियन का खेमा था। शामियाने में एक सिंहासन इस प्रकार रखा गया था, जिससे उसका आधा–आधा भाग दोनो राज्यों की समा में पड़ता था। अन्य प्रबंध किया गया था कि उनका आगमन एक समय दौलतखाने में हो। दो विभिन्न द्वारों से खेमे में राजाओं का आना निश्चित हुआ था, अतएव उनकी पेशवाई करने के लिए पैदल सेना को, दो भागों में विभाजित कर, दोनों ओर के दरवाजों पर खड़ा कर दिया गया था। घुड़सवार दोनों सीमाओं पर खेमे के सामने एक पंक्ति में खड़े किये गये थे। तोपे उनके पीछे इस प्रकार रखी गई थी कि एक–एक तोप सीमा के दोनों तरफ पडती थी। उनके सम्मान का अन्य प्रबंध भी सूर्यास्त से पूर्व कर लिया गया था। फिर एक तोप दागी गई, जिस पर महाराजा ने अपने दरबारियों सहित घड़ियाला से प्रस्थान किया जो पूर्वोक्त स्थान से डेढ मील दूरी पर था। महारावल को दो मील का मार्ग तय करना पड़ा, जिससे यह कुछ देर में पहुंचा और इस प्रकार दोनों राजाओं के खासों (ढकी हुई पालकियों) में से उतरने के पूर्व ही उनकी 17 तोपों की सलामी अलग–अलग सर हो गई।

''प्रबंध तो ऐसा किया था कि दोनों राजा अपने साथ अधिक आदमी न लावें फिर भी तीन हजार व्यक्ति एकत्रित हो गये और सजे हूए हाथी, घोड़े, नक्कारे, निशान आदि से उस स्थान की शोभा बहुत बढ गई। किसी राजा के लिए पेशवाई नहीं रखी गई क्योंकि मैं (बोइलो) ही एक व्यक्ति इस कार्य के लिये नियुक्त था, जो पूर्व एवं पश्चिम से आने वाले दोनों राजाओं की एक साथ पेशवाई कर सकता था। खेमे के निकट पहुंचने पर सैनिकों ने दोनों राजाओं का स्वागत किया। बहुत से ठाकुर और महाजन भी उनके साथ थे और अपने जीवन में प्रथम बार दोनों राजा एक ही तम्बू के नीचे एकत्र हुए।

लेफ्टिनेंट ट्राविलियम खेमे के बीच की सीमा के मध्य में खडा हुआ था। दोनों के निकट पहुंचने पर उसने अपना एक–एक हाथ दोनों की ओर बढ़ाया और उनका मिलाप करा दिया। फिर दोनों ने एक–दूसरे से जुहार किया। जिस समय वे दोनों परस्पर गले मिले उस समय सारा दरबार 'मुबारक–मुबारक' की ध्वनि से प्रतिध्वनित हो उठा। इसके बाद दोनों राजा सिंहासन पर बैठे। इस बीच उनके दरबारी भी अंदर आ गये। कुछ दरबारी तो भड़कीली पोशाक और कीमती आभूषण पहने हुए थे, परन्तु महाराजा और महारावल केवल श्वेत रंग के जामे और मोतियों और पन्नों के कंठे पहने हुए थे तथा दोनों के कमर में खंजर पर लटकाये हूए थ। लेफ्टिनेंट ट्राविलियम महाराजा की दाहिनी तरफ गलीचे पर बैठा था और मैं महारावल की बाईं तरफ। उनके मंत्री तथा सरदार उनके चारों तरफ घेरा बनाकर बैठे थे। दरवाजों के सामने के गलीचों पर अन्य सम्मानित सरदार थे और निम्न श्रेणी के सरदार बाहर तक खड़े हए थे। इस अवसर पर मारवाड़ और मेवाड़ का सबसे बडा साहूकार जोरावरमल, जो दोनों में से किसी के साथ नहीं था, लेकिन दोनों का मित्र था, जैसलमेर की पंक्ति की तरफ बैठा था।''

'' इस मिलाप के समय दोनों राजा अपने सरदारों का एक दूसरे का परिचय देते और अंग्रेज अधिकारियों की प्रशंसा कर रहे थे। कुछ समय के उपरान्त इत्र और पान आदि हुआ तथा दोनों को समान सम्मान के साथ विदा करने की सावधानी पर विशेष ध्यान रखा गया। इस अवसर पर लेफ्टिनेंट ट्राविलियन ने अपने एक–एक हाथ दोनों के अंग पर एक ही समय इत्र लगाया, जिससे महारावल बहुत प्रसन्न हुआ, क्योंकि इससे उसका संशय की दाहिनी और बैठे हुए अधिक शक्तिशाली महाराजा को ही प्रथम इत्र लगाया जायेगा, मिट गया। दोनों ने अंग्रेज अधिकारियों और फिर एक दूसरे को धन्यवाद दिया। इसके बाद दोनों ने सिंहासन से अलग खडे हाकर एक दूसरे से जुहार किया और जैसे खेमे में आये थे, वैसे ही वे विभिन्न द्वारों से विदा हुए। इस अवसर पर सलामी की तोपें नहीं दागी गई, परन्तु दोनों शासकों के अपन–अपने खेमों में पहुंचने पर उनकी तरफ के लोगों ने सलामी अदा की।''

''इस प्रकार मेल हो जाने पर पीछे मुलाकातों में कोई आपति न रही। फिर दोनों के एक दूसरें के खमों में जाकर मिलने की व्यवस्था की गई। तो 16 मई को महारावल महाराजा के घड़ियाला के खेमे में मिलने को गया जहां उसका अच्छा स्वागत हुआ। बडी देर के वार्तालाप के बाद महाराजा ने उसे उचित उपहार आदि देकर विदा किया। उसी रात्रि वहां महारावल के गिरराजसर के खेमे में जाकर उससे मिला, जहां उसका समुचित सम्मान किया गया और महारावल ने उसे हाथी, घोडे, रत्न आदि भेंट किये ।इन दोनों ही अवसरों पर दोनों ने एक ही थाल में भोजन किया और नाच–जलसे के अनन्तर आपस में बडी देर तक बातचीत होती रही।''

'' इस अच्छे काम को पूरा करने के लिए ट्राविलियन ने दोनों और के जीन–तीन विश्वासपात्र व्यक्तियों की एक सभा कराके आपस के एक लिखित इकरारनामा करा दिया, जिसके अनुसार भविष्य मे एक राज्य का दूसरे राज्य पर चढाई न करने, वहां शरण लेने वाले, अपराधियों को लौटा देने और यदि अकेला एक राज्य किसी दुश्मन का सामने करने में असमर्थ हो तो दोनों राज्यों को मिलकर उसका दमन करने आदि का निश्चय हुआ।" [207] हर्ष की बात थी कि उसका प्रयास सफल हुआ।[208]

लक्ष्मीचन्द सेवक ने लिखा है कि इस सन्धि के अवसर पर जैसलमेर को युद्ध में हुई क्षति की पूर्ति के लिए ढाई लाख रूपये तय हुए थे। वह रकम महारावल ने नहीं ली लेकिन महाराजा रतनसिह से पूंगल का ठिकाना राव रामसिह को दिलवा दिया।[209]

इस प्रकार पिछले 15 वर्षों से दोनो पक्षों के बीच चले आ रहे वैर और प्रतिशोध की भावना का पटाक्षेप हुआ। यह युद्ध जैसलमेर के कीर्ति का परिचायक है। युद्ध का कारण चाहे कुछ भी रहा हो,

लेकिन जब शत्रु ने पूरी तैयारी के साथ पहल कर आक्रमण किया हो, तो बात अस्मिता पर आंच की हो जाती है। ईंट का जबाब पत्थर से देना समयानकुल हो जाता हैं और ऐसे समय पर लड़ने वाले योद्धा भी तो जैसाण की आन,बान और शान के लिए लड़े थे, इसलिए हमें उन पर गर्व महसूस करना चाहिए। युद्धस्थल पर बने स्मारकों की सुरक्षा एवं उनका संवर्द्धन हमारी सामूहिक जिम्मदारी है। सरकार से युद्धस्थल को गौरव घोषित करने के प्रयास करने चाहिए।

यह विजय महारावल को मॉ स्वांगिया व गुरू महंत श्री सहजनाथजी के आशीर्वाद से मिली थी। इसलिए महारावल ने महंत श्री सहजनाथजी को विनयपूर्वक आग्रहकर एक मठ बनाकर दिया। म्याजलार से ढाई कोस दूरी जहां खैरिया (ख्याला) भील का खेत था,वहाँ पवित्र भूमि जानकर महंत श्री ने अपना धूणा लगाया था। मठ की नीव विक्रम संवत 1886 (1829 ई.) की फाल्गुन महाशिव रात्रि के दिन रखी गई थी। गुरू सहजनाथजी ने ख्याला भील का नाम अमर रखने हेतु इस मठ का नाम ख्याला भील के नाम से ख्याला मठ रखा,जो आज भी मठ ख्याला के नाम से प्रसिद्ध है।[210]

राजपूती संस्कृति परम्परा में वीर बलिदानी व मातृभूमि की रक्षार्थ अपने प्राण न्यौछावर करने वाले रणबाकुरों के बलिदान स्थल पर स्मारक या छतरी बनाने की सुदीर्घ परम्परा रही है। यह उन अमर शहीदों की हमारे लिये विरासत है, उनके यादगार है जो हमें उनके द्वारा हंसते–हंसते प्राण देने वाले शूरवीरों की गाथा सुनाते है। बासनपीर का यह युद्ध राजपूताना के किन्ही दो रियासतों के बीच होने वाला अन्तिम युद्ध था। [211] ***उसके बाद राजस्थान के किन्ही दो रियासतों में परस्पर युद्ध का उल्लेख इतिहास में नहीं मिलता है।***

महारावल गजसिंह ने भी रामचन्द्रसिंह सोढा की यादगार में बासनपी में छतरी बनाकर प्रतिष्ठा करवाई। [212] [114] अब उस पर मूर्तिभिलेख भी नहीं है। जानकारी के अनुसार छतरी में लगी मूर्ति व मूर्तिभिलेख असुरक्षित जानकार करड़ा के ठाकुर स्व. भंवरसिंह सोढा ने लाकर करड़ा हवेली में रखी है जो आज भी रखी हुई है।[213] [115] पर अफसोस की बात है कि वर्तमान में रामचन्द्रसिंह के सैकडो वंशज होते हुए भी बासनपी युद्ध के विजेता इस महान योद्धा की छत्री आज भी बासनपी नई गांव में उपेक्षित हालत में पड़ी है जिसे 25 जनवरी 2020 को बासनपी गांव के असामाजिक तत्वों द्वारा छतरी को तोड़कर गिरा दिया गया है।[214] यह स्मारक आज अपने पूर्वजो से उसे पुनः संरक्षित करने का आह्वान कर रही है क्षतिग्रस्त उस स्मारक को लगभग एक वर्ष बीतने को आया है परन्तु अभी तक किसी ने उसकी सुध नहीं ली है। उनके वंशजों को पहलकर वहाँ शीघ्रतिशीघ्र पुनः छतरी व मूर्ति प्रतिष्ठापित करनी चाहिए, यह उस अमर बलिदानी वीर योद्धा के लिए सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

इतिहास हमारे पूर्वजो की थाती है, विरासत है, धरोहर है जिन्हें वे हमे सौपकर गये है। आज हमारे गर्व का कारण उनका बलिदान ,शौर्य और त्याग ही है। उसे संरक्षित करना हमारा नैतिक कर्तव्य और उत्तरदायित्व भी बनता है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जो कौम अपने पूर्वजो का इतिहास भूल जाती है, उसका पतन हो जाता है। यह मूर्तियां शिलालेख या स्मारक, छत्रियों हमें अपने उन पूर्वजो के उज्ज्वल इतिहास से जोड़ती है और यह उनके बलिदान के प्रतीक है हमें इन पर गर्व होना चाहिए।

हां यह सत्य है कि हमें इतिहास में ही नहीं जीना है, परन्तु इसका अर्थ यह कतई नहीं है कि हम अपने पूर्वजों के गौरवशाली कृत्यों व इतिहास को आधुनिकता की अंधी दौड़ में भूला ही दे। यह ध्रुव सत्य है कि आज भी हमारी सामाजिक प्रस्थिति, प्रतिष्ठा व सम्मान उन पूर्वजों के त्याग व बलिदान का ही प्रतिफल है।

परन्तु सवाल यह है कि क्यों आज हम अपने पूर्वजो के बलिदानों के इन अमर प्रतीकों के प्रति अपेक्षित भाव रखते है। क्यों हमारा ध्यान पांच पीढीयों से इनके संरक्षण व सम्मान की तरफ नहीं गया, यह समझ से परे है। अगर हम ही अपने पूर्वजो के गौरवशाली प्रतीकों का संरक्षण नहीं करेंगे तो दूसरे कोई आज तो क्या, कल भी नहीं करने वाले है। उन्होने अपना जीवन बलिदान करके हमें गर्व करने लायक बनाया है इसलिए हमारी यह नैतिक जिम्मेदारी भी बनती है कि हम उन्हें संरक्षित करें। ऐसी आशा और उम्मीद करता हूं। जय जैसाण।

सन्दर्भ सूची :–

1. राठौड़, डॉ विक्रमसिंह, राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, राजस्थानी साहित्य संस्थान जोधपुर, 2007, पृ.19,25
2. टॉड, कर्नल जेम्स, राजस्थान का इतिहास, अनुवाद कालूराम शर्मा, श्याम प्रकाशन जयपुर 2013, पृ.90
3. वही, पृ.155
4. रघुबीरसिंह, पूर्व आधुनिक राजस्थान (1527–1947) पंचशील प्रकाशन जयपुर, 1990, पृ.16
5. राठौड़, डॉ विक्रमसिंह, राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, राजस्थानी साहित्य संस्थान जोधपुर, 2007, पृ.26
6. कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई जैसलमेर एवं साक्षात्कार, कवि अम्बादान निवासी, सुमलियाई जैसलमेर
7. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ. 242
8. माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ. 98
9. मयंक, डॉ. मांगीलाल व्यास, जैसलमेर राज्य का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2011, पृ.108–109
10. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ.249–250
11. शर्मा, नन्दकिशोर, युगयुगीन वल्ल प्रदेश जैसलमेर राज्य का राजनीतिक इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2002, पृ. 198
12. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
13. भाटिया, ओमप्रकाश दीवान सालिमसिंह, राजस्थान साहित्य अकादमी, 2003, पृ. 56
14. मयंक, डॉ. मांगीलाल व्यास, जैसलमेर राज्य का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2011, पृ.127
15. श्यामलदास, वीर विनोद, महाराणा मेवाड़ हिस्टोरीकल पब्लिकेशन ट्रस्ट, उदयपुर, चतुर्थ संस्करण 2017 पृ.1746 में यह तिथि विक्रमी संवत 1877 आषाढ़ कृष्ण अष्टमी सोमवार (3 जुलाई 1820 ई.) दी गई है, भाटी, हुकमसिंह, पृ. 269 जो सही प्रतीत होती है। किशना आढा, भीमविलास, संपादक देव कोठारी, साहित्य संस्थान,उदयपुर 1998, पृ. 38 में संबंध होने का समय वि, स, 1876 लिखा है।
16. मेहता,उमेदसिंह, तवारीख टावरी मोहता महाजन खानदान, कृष्णा प्रेस, इलाहाबाद 1925, पृ. 84
17. महामहोपाध्याय कविराज श्यामलदास, वीर विनोद, महाराणा मेवाड़ हिस्टोरीकल पब्लिकेशन ट्रस्ट, उदयपुर, चतुर्थ संस्करण 2017,पृ. 1746

18. सेवक, लक्ष्मीचन्द, तवारीख जैससमेर, चिराग राजिस्थान व राजपूताना गजट यत्रांलय, अजमेर,1891,पृ.80
19. वही, पृ.80
20. किशना आढा, भीमविलास, संपादक देव कोठारी, साहित्य संस्थान, उदयपुर 1998,पृ. 38
21. भाटी, गोपालसिंह तेजमालता, जैसलमेर के भाटी शासक उनके पूर्वज एवं वंशजों का क्रमबद्ध स्वर्णिम इतिहास, ज्योति ऑफसेट प्रिन्टर्स, जैसलमेर, 2002 पृ.170
22. माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ.113
23. सेवक, लक्ष्मीचन्द, तवारीख जैससमेर, चिराग राजिस्थान व राजपूताना गजट यत्रांलय,अजमेर,1891,पृ.80
24. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ.269
25. महामहोपाध्याय कविराज श्यामलदास, वीर विनोद, महाराणा मेवाड़ हिस्टोरीकल पब्लिकेशन ट्रस्ट, उदयपुर, चतुर्थ संस्करण 2017,पृ.1746
26. गहलोत, जगदीशसिंह, राजपूतानें का इतिहास, भाग II, हिन्दी साहित्य मन्दिर जोधपुर, 1937 पृ. 686, सेवक, लक्ष्मीचन्द पृ.80, भाटी, रिड़मलसिंह,पृ.408, हरिदत व्यास,पृ.138
27. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
28. माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ.113
29. व्यास, श्रीहरिदत गोविन्द, जैसलमेर का इतिहास, हिमालयन प्रेस, बनारस,1920 पृ.138
30. मेहता,उमेदसिंह, तवारीख टावरी मोहता महाजन खानदान, कृष्णा प्रेस, इलाहाबाद 1925, पृ.50
31. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
32. वही
33. वही
34. भाटी हरिसिह पूगल का इतिहास, प्रकाशक दीपसिंह भाटी, पुरानी गिन्नानी, बीकानेर 1989,पृ .519
35. ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द,बीकानेर राज्य का इतिहास भाग–2, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2007 पृ. 394
36. टॉड, कर्नल जेम्स, जैसलमेर राज्य का इतिहास, अनु. बलदेव प्रसाद मिश्र एवं ज्वालाप्रसाद मिश्र, युनिक ट्रेडर्स,चौड़ा रास्ता,जयपुर 1987, पृ. 93–94, ओझा,भाग–2,पृ.51
37. वही पृ. 93
38. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ.269
39. वही पृ.272
40. टॉड, कर्नल जेम्स, जैसलमेर राज्य का इतिहास, अनु. बलदेव प्रसाद मिश्र एवं ज्वालाप्रसाद मिश्र, युनिक ट्रेडर्स,चौड़ा रास्ता,जयपुर 1987, पृ. 93–94
41. भाटी हरिसिह पूगल का इतिहास, प्रकाशक दीपसिंह भाटी, पुरानी गिन्नानी, बीकानेर 1989, पृ. 519
42. वही पृ.519
43. शर्मा, नन्दकिशोर, युगयुगीन वल्ल प्रदेश जैसलमेर राज्य का राजनीतिक इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2002, पृ.205

44. मेहता, अजीतसिंह, जैसलमेर री ख्यात, संपादक नारायणसिंह भाटी, राजस्थानी शौध संस्थान, जोधपुर, 1981 पृ. 85
45. ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द,बीकानेर राज्य का इतिहास भाग–2, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2007 पृ.54
46. भाटी हरिसिह पूगल का इतिहास, प्रकाशक दीपसिह भाटी, पुरानी गिन्नानी, बीकानेर 1989,पृ.519
47. माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ.119
48. वही पृ.119 , तेजसिह महारावल गजसिह के बड़े भाई थे। मेहता सालिमसिह ने उनको राज्याधिकार से वंचित करवा कर गजसिह को 1804 ई. में उतराधिकारी नियुक्त किया तथा तेजसिह को देश निकाला दिया था जो उस समय बीकानेर में रह रहे थें।
49. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
50. शर्मा, नन्दकिशोर, युगयुगीन वल्ल प्रदेश जैसलमेर राज्य का राजनीतिक इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2002, पृ.205
51. ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द,बीकानेर राज्य का इतिहास भाग–2, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2007 पृ.54
52. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
53. सेवक, लक्षमीचन्द, तवारीख जैससमेर, चिराग राजिस्थान व राजपूताना गजट यत्रांलय,अजमेर,1891,पृ.80
54. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ.274
55. मयंक, डॉ. मांगीलाल व्यास, जैसलमेर राज्य का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2011, पृ.130
56. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
57. कानोता, ठा. मोहनसिंह, चांपावतों का का इतिहास, रणबाकुंरा प्रकाशन, जयपुर, 1991 पृ. 368
58. माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ.120
59. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ. 416
60. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
61. वही
62. वही
63. शर्मा, नन्दकिशोर, युगयुगीन वल्ल प्रदेश जैसलमेर राज्य का राजनीतिक इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2002, पृ.205
64. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
65. वही
66. सेवक, लक्षमीचन्द, तवारीख जैससमेर, चिराग राजिस्थान व राजपूताना गजट यत्रांलय,अजमेर,1891,पृ.133
67. भाटी, रतनसिंह, बिहारीदासोत भाटी, रॉयल पब्लिकेशन, जोधपुर, 2015, पृ.137
68. वार्ता, तनेरावसिह भाटी निवासी, बडोड़ागांव, जैसलमेर।
69. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
70. वही
71. वही

72. वही
73. वही
74. वही
75. वही
76. वही
77. सेवक, लक्ष्मीचन्द, तवारीख जैससमेर, चिराग राजिस्थान व राजपूताना गजट यत्रांलय,अजमेर,1891,पृ.80
78. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ.274
79. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
80. वही
81. वही
82. वही
83. माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ.120
84. शर्मा, नन्दकिशोर, युगयुगीन वल्ल प्रदेश जैसलमेर राज्य का राजनीतिक इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2002, पृ.205
85. व्यास, श्रीहरिदत गोविन्द, जैसलमेर का इतिहास, हिमालयन प्रेस बनारस,1920 पृ.142
86. माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ.120–121
87. Somani, R V ,History of Jaisalmer,Panchsheel prakashan, Jaipur,1990] पृ.84,उस समय पोकरण के ठाकुर भभूतसिह थें।
88. व्यास, श्रीहरिदत गोविन्द, जैसलमेर का इतिहास, हिमालयन प्रेस, बनारस,1920 पृ.142
89. माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ.120
90. व्यास, श्रीहरिदत गोविन्द, जैसलमेर का इतिहास, हिमालयन प्रेस, बनारस,1920 पृ.142
91. राव, अर्जुनदान, मठ ख्याला, मठ ख्याला म्याजलार, जैसलमेर, 1990, पृ.29–30
92. माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ.120
93. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
94. वही
95. गहलोत, जगदीशसिंह, राजपूतानें का इतिहास, भाग II, हिन्दी साहित्य मन्दिर जोधपुर, 1937 पृ. 686
96. मेहता, अजीतसिंह, भाटीनामा, ग्रथांक.....,.....1880 पृ. 75
97. भाटी, रतनसिंह, बिहारीदासोत भाटी, रॉयल पब्लिकेशन, जोधपुर, 2015, पृ.136
98. नैणसी मुहणोत, नैणसी री ख्यात भाग 1, प्रधान संपादक श्री बदरीप्रसाद साकरिया, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, 1961, पृ.178
99. पालीवाल, गणपत, सं. विरासत संकलन, पालीवाल सांस्कृतिक धरोहर ट्रस्ट, जोधपुर, 2005 पृ.127
100. मेहता, अजीतसिंह, जुगराफिया जैसलमेर, ग्रथांक .....सारसुधानिधि प्रेस कलकता, 1880, पृ.18
101. प्रेम जगानी, आओ गांव चले, राजस्थान पत्रिका अभियान, 1997 से 2005 के आलेख
102. व्यास, श्रीहरिदत गोविन्द, जैसलमेर का इतिहास, हिमालयन प्रेस, बनारस,1920 पृ.143–44
103. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर

104. गीत सोढा रामचंद्रसिह रौ,रचियता–अज्ञात, कवि अम्बादान संग्रह,सुमलियाई जैसलमेर
105. रतनू साहिबदान,गजनप्रकाश अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह,सुमलियाई जैसलमेर
106. वही
107. गीत सोढा रामचंद्रसिह रौ,रचियता–अज्ञात, कवि अम्बादान संग्रह,सुमलियाई जैसलमेर
108. भाटी हरिसिह पूगल का इतिहास, प्रकाशक दीपसिह भाटी, पुरानी गिन्नानी, बीकानेर 1989,पृ.520
109. व्यास, श्रीहरिदत गोविन्द, जैसलमेर का इतिहास, हिमालयन प्रेस, बनारस,1920 पृ.143
110. भाटी हरिसिह पूगल का इतिहास, प्रकाशक दीपसिह भाटी, पुरानी गिन्नानी, बीकानेर 1989,पृ.520
111. राव, अर्जुनदान, मठ ख्याला, मठ ख्याला म्याजलार, जैसलमेर, 1990, पृ.29–30
112. व्यास, श्रीहरिदत गोविन्द, जैसलमेर का इतिहास, हिमालयन प्रेस, बनारस,1920 पृ.144
113. गीत सोढा रामचंद्रसिह रौ,रचियता–अज्ञात, कवि अम्बादान संग्रह,सुमलियाई जैसलमेर
114. व्यास, श्रीहरिदत गोविन्द, जैसलमेर का इतिहास, हिमालयन प्रेस, बनारस,1920 पृ.144
115. गीत सोढा रामचंद्रसिह रौ,रचियता–अज्ञात, कवि अम्बादान संग्रह,सुमलियाई जैसलमेर
116. वही
117. राव, अर्जुनदान, मठ ख्याला, मठ ख्याला म्याजलार, जैसलमेर, 1990, पृ.29–30
118. गीत सोढा रामचंद्रसिह रौ,रचियता–अज्ञात, कवि अम्बादान संग्रह,सुमलियाई जैसलमेर
119. सचियापुरा, संग्रामसिंह ''सो धरती सोढांण'' अप्रकाशित
120. व्यास, श्रीहरिदत गोविन्द, जैसलमेर का इतिहास, हिमालयन प्रेस, बनारस,1920 पृ.144
121. व्यास, श्रीहरिदत गोविन्द, जैसलमेर का इतिहास, हिमालयन प्रेस, बनारस,1920 पृ.144
122. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ.274
123. देवड़ा, डॉ.घनश्याम, ख्यातकार दयालदास सिढायच, सम्पादक नारायणसिंह भाटी (परम्परा भाग 74–75), राजस्थानी शौध संस्थान, जोधपुर पृ.115
124. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
125. वही
126. वही
127. वही
128. वही
129. वही
130. व्यास, श्रीहरिदत गोविन्द, जैसलमेर का इतिहास, हिमालयन प्रेस, बनारस,1920 पृ.144
131. भाटी, गोपालसिंह तेजमालता, राठौड़ राजवंश का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2015, पृ.176
132. व्यास, श्रीहरिदत गोविन्द, जैसलमेर का इतिहास, हिमालयन प्रेस, बनारस,1920, पृ.144
133. शर्मा, नन्दकिशोर, युगयुगीन वल्ल प्रदेश जैसलमेर राज्य का राजनीतिक इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2002, पृ. 206
134. राव, अर्जुनदान, मठ ख्याला, मठ ख्याला म्याजलार, जैसलमेर, 1990, पृ.29–30
135. पालीवाल, गणपत, सं. विरासत संकलन, पालीवाल सांस्कृतिक धरोहर ट्रस्ट, जोधपुर, 2005 पृ.127
136. राव अर्जुनदान राखी की बही

137. वही
138. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ. 418
139. वही पृ. 404
140. भाटी, रिड़मलसिंह झिनझिनयाली, जैसलमेर का इतिहास, चन्द्रा एण्ड चन्द्रा ऑफसेट, जैसलमेर 1998, पृ.436
141. भाटी हरिसिह पूगल का इतिहास, प्रकाशक दीपसिह भाटी, पुरानी गिन्नानी, बीकानेर 1989,पृ.519
142. वार्ता, अजयपालसिह भाटी निवासी, राजगढ़, जैसलमेर।
143. सेवक, लक्षमीचन्द, तवारीख जैससमेर, चिराग राजिस्थान व राजपूताना गजट यत्रांलय,अजमेर,1891,पृ.81
144. वही पृ.81
145. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ.405
146. मेहता, अजीतसिंह, जैसलमेर री ख्यात, संपादक नारायणसिंह भाटी, राजस्थानी शौध संस्थान, जोधपुर, 1981 पृ. 85
147. वार्ता, शैतानसिह भाटी निवासी, पूनमनगर जैसलमेर।
148. भाटी, रिड़मलसिंह झिनझिनयाली, जैसलमेर का इतिहास, चन्द्रा एण्ड चन्द्रा ऑफसेट, जैसलमेर 1998, पृ.399
149. सेवक, लक्षमीचन्द, तवारीख जैससमेर, चिराग राजिस्थान व राजपूताना गजट यत्रांलय,अजमेर,1891,पृ.81, रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
150. स्थानीय सर्वेक्षण के अनुसार
151. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
152. शर्मा, नन्दकिशोर, युगयुगीन वल्ल प्रदेश जैसलमेर राज्य का राजनीतिक इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2002, पृ. 246
153. स्थानीय सर्वेक्षण के अनुसार
154. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ.418
155. वही पृ.419, रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
156. स्थानीय सर्वेक्षण के अनुसार
157. सेवक, लक्षमीचन्द, तवारीख जैससमेर, चिराग राजिस्थान व राजपूताना गजट यत्रांलय,अजमेर,1891,पृ. 108
158. स्थानीय सर्वेक्षण के अनुसार
159. स्थानीय सर्वेक्षण के अनुसार
160. रतनु साहिबदान,गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
161. भाटी, गोपालसिंह तेजमालता, राठौड़ राजवंश का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2015, पृ.176
162. वही पृ. 419

163. वही पृ. 419
164. वही पृ. 419
165. शर्मा, नन्दकिशोर, लोद्रवा जैसलमेर केन्द्रित सिंध–हिन्द का इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2014, पृ. 173–175
166. सेवक, लक्ष्मीचन्द, तवारीख जैससमेर, चिराग राजिस्थान व राजपूताना गजट यत्रांलय,अजमेर,1891,पृ. 241
167. शर्मा, पद्यजा, जोधपुर के महाराजा मानसिंह और अनका काल (1803–1843), राजस्थान हिन्दी ग्रंन्थ अकादमी, जयपुर, 1974, पृ. 160, शर्मा, नन्दकिशोर, लोद्रवा जैसलमेर केन्द्रित सिंध–हिन्द का इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2014, पृ. 173–175
168. शर्मा, नन्दकिशोर, लोद्रवा जैसलमेर केन्द्रित सिंध–हिन्द का इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2014, पृ. 178, शर्मा, नन्दकिशोर, जैसलमेर का सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2011, पृ. 230–231
169. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ. 275
170. वही पृ. 273
171. माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ.117
172. वही, परिशिष्ट 5, रतनु साहिबदान,गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
173. ओझा, महामहोपाध्याय रायबहादुर गौरीशंकर ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास भाग 1 व 2 , राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर, पृ. 1021–1022, रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
174. शर्मा, नन्दकिशोर, लोद्रवा जैसलमेर केन्द्रित सिंध–हिन्द का इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2014, पृ. 178, रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
175. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ. 418
176. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
177. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ. 419
178. वही पृ. 419
179. वही पृ. 419
180. वही पृ. 390
181. वही पृ. 391
182. जगाण, घनश्याम, जगाणी वंशावली, प्रेम प्रकाश, सदर बाजार, जैसलमे, 1992, पृ. 3–4
183. वही पृ. 21–22
184. भाटी, गोपालसिंह तेजमालता, राठौड़ राजवंश का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2015, पृ.176, रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर
185. भाटी, गोपालसिंह तेजमालता, राठौड़ राजवंश का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2015, पृ.176, शर्मा, नन्दकिशोर, युगयुगीन वल्ल प्रदेश जैसलमेर राज्य का राजनीतिक इतिहास,

सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2002, पृ.206, भाटी, रतनसिंह, बिहारीदासोत भाटी, रॉयल पब्लिकेशन, जोधपुर, 2015, पृ.136, माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ.121

186. मेहता, अजीतसिंह, जैसलमेर री ख्यात, संपादक नारायणसिंह भाटी, राजस्थानी शौध संस्थान, जोधपुर, 1981 पृ. 85

187. ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द,बीकानेर राज्य का इतिहास भाग–2, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2007 पृ.45, महामहोपाध्याय कविराज श्यामलदास, वीर विनोद, भाग–2 महाराणा मेवाड़ हिस्टोरीकल पब्लिकेशन ट्रस्ट, उदयपुर, चतुर्थ संस्करण 2017,पृ.509

188. अमरचंद सुराणा के 7वे वंशज अरविंद जी से वार्तानुसार, पाक्षिक चौपाल वार्ता, श्री सुसवाणी माता विषेशांक आचार्यो का चौक बीकानेर , 5 अक्टुबर 2000 पृ. 54–55

189. ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द,बीकानेर राज्य का इतिहास भाग–2, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2007 पृ. 58 व 63

190. रतनु साहिबदान, गजनप्रकाश, अप्रकाशित, कवि अम्बादान संग्रह, सुमलियाई, जैसलमेर

191. पालीवाल, गणपत, सं. विरासत संकलन, पालीवाल सांस्कृतिक धरोहर ट्रस्ट, जोधपुर, 2005 पृ.127

192. राजस्थान पत्रिका 02.02.2020 का जैसलमेर बाड़मेर अंक

193. शर्मा, नन्दकिशोर, युगयुगीन वल्ल प्रदेश जैसलमेर राज्य का राजनीतिक इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2002, पृ.205

194. भाटी हरिसिह पूगल का इतिहास, प्रकाशक दीपसिह भाटी, पुरानी गिन्नानी, बीकानेर 1989,पृ.520

195. सेवक, लक्षमीचन्द, तवारीख जैससमेर, चिराग राजिस्थान व राजपूताना गजट यत्रांलय, अजमेर,1891,पृ.81

196. भाटी, रिड़मलसिंह झिनझिनयाली, जैसलमेर का इतिहास, चन्द्रा एण्ड चन्द्रा ऑफसेट, जैसलमेर 1998, पृ.409

197. राव, अर्जुनदान, मठ ख्याला, मठ ख्याला म्याजलार, जैसलमेर, 1990, पृ.30

198. ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द,बीकानेर राज्य का इतिहास भाग–2, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2007 पृ.55

199. माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ.121

200. गुप्ता, मोहनलाल, बीकानेर संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, नवभारत प्रकाशन जोधपुर, 2004, पृ.202

201. भाटी, हुकमसिंह, भाटी वंश का गौरवमय इतिहास भाग–1, भाटी इतिहास समिति, जोधपुर, 2013 पृ.411

202. स्थानीय सर्वेक्षण के अनुसार

203. माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ.122

204. Somani, R V ,History of Jaisalmer,Panchsheel prakashan, Jaipur,1990,पृ.84

205. मयंक, डॉ. मांगीलाल व्यास, जैसलमेर राज्य का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2011, पृ.130

206. माहेश्वरी, डॉ. हरिवल्लभ, जैसलमेर का इतिहास, द हरीटेज, ग्वालियर, 2006 पृ.122–123

207. ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द,बीकानेर राज्य का इतिहास भाग–2, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2007 पृ.55–57

208. सहगल, के. के. राजस्थान जिला गजेटियर्स जैसलमेर, राजकीय मुद्रणालय, बीकानेर,1997 पृ.44
209. सेवक, लक्ष्मीचन्द, तवारीख जैससमेर, चिराग राजिस्थान व राजपूताना गजट यत्रांलय,अजमेर,1891,पृ.81
210. राव, अर्जुनदान, मठ ख्याला, मठ ख्याला म्याजलार, जैसलमेर, 1990, पृ.29–30
211. मयंक, डॉ. मांगीलाल व्यास, जैसलमेर राज्य का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2011, पृ.130
212. शर्मा, नन्दकिशोर, युगयुगीन वल्ल प्रदेश जैसलमेर राज्य का राजनीतिक इतिहास, सीमान्त प्रकाशन, जैसलमेर, 2002, पृ.207
213. स्थानीय सर्वेक्षण के अनुसार
214. राजस्थान पत्रिका 03.02.2020 का जैसलमेर अंक

छायाचित्र

छायाचित्र 01

- **करडा हवेली जैसलमेर में सोढा रामचन्द्रसिंह की मूर्ति का फोटो**

(मौका मुआयना –07.10.2019)

छायाचित्र 02

- **बीजराज का तला गांव में सोढा रामचन्द्रसिंह के पालिया का फोटो** (मौका मुआयना –28.12.2019)

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2 5 8 2 – 0 4 6 X
International Journal for Research in Applied History
Website: www.anshjournal.com

छायाचित्र 03 – 04

बासनपी का तालाब के छायाचित्र जिसकी पाळ व आगौर में 27 मार्च 1828 को जैसलमेर व बीकानेर की सेनाओं के बीच युद्व हुआ था।

छायाचित्र 05

- **युद्धस्थल बासनपी नई गांव में सोढा रामचन्द्रसिंह की छतरी का फोटो** (मौका मुआयना –30.10.2019)

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2 5 8 2 – 0 4 6 X
International Journal for Research in Applied History
Website: www.anshjournal.com

छायाचित्र 06 – 07

युद्धस्थल बासनपी गांव में सोढा रामचन्द्रसिंह की मूल छतरी जो राजकीय विद्यालय के मुख्य द्वार सामने की तरफ तालाब के आगौर में स्थित थी, का फोटों जिसे 25 जनवरी 2020 को असामाजिक तत्वों द्वारा छतरी को तोड़कर गिरा दिया गया है।

छायाचित्र 08

• बासणपी तालाब की पाल पर स्थित **छिरक जाति के पालीवाल हदूद मेघाणी की छतरी** (मौका मुआयना –30.10.2019)

Ansh - Journal of History
A Peer Reviewed International Refereed Journal
E-ISSN No. 2 5 8 2 – 0 4 6 X
International Journal for Research in Applied History
Website: www.anshjournal.com

छायाचित्र 09

छिरक जाति के पालीवाल हदूद मेघाणी की छतरी जो तालाब की पाल पर स्थित थी। दोनो छतरियों को 25 जनवरी 2020 को असामाजिक तत्वों द्वारा तोड़कर गिरा दिया गया है।